एम0 ए0 हिन्दी द्वितीय सत्रा

पाठ्यक्रम– 5

भक्ति एवं रीति काव्य

पाठ 1 से 4

डॉ0 मंगत राम

International Centre for Distance Education and Open Learning (ICDEOL)

Himachal Pradesh University

Summer Hill, Shimla, 171005

अनुक्रमणिका

क्र.सं.	खण्ड	पृष्ठ संख्या
खण्ड–1	मीराबाई और उनका काव्य	1
खण्ड–2	रसखान और उनका काव्य	13
खण्ड–3	घनानंद और उनका काव्य	27
खण्ड–4	बिहारीलाल और उनका काव्य	53
अभ्यास हेतु लघुतरीय प्रश्न		84
महत्वपूर्ण प्रश्न		88
सहायक पुस्तकें		89

खण्ड – एक

मीरा बाई और उनका काव्य

1.1 भूमिका

1.2 उद्देश्य

1.3 मीराबाई का जीवन परिचय

  1.3.1 जन्म तथा परिवार

  1.3.2 मीरा की शिक्षा–दीक्षा

  1.3.3 मीरा की मृत्यु

1.4 मीराबाई का साहित्यिक परिचय

1.5 मीराबाई की साहित्यिक विशेषताएं

  1.5.1 प्रेम भावना

  1.5.2 भक्ति भावना

  1.5.3 विरह की अनुभूति

  1.5.4 प्रकृति वर्णन

  1.5.5 गीतात्मकता/लयात्मकता

  1.5.6 भाषा का प्रयोग

1.6 मीराबाई की भक्ति भावना

  1.6.1 सगुण भक्ति भावना

  1.6.2 माधुर्य भक्ति भावना

  1.6.3 दाम्पत्य भक्ति

  1.6.4 पाद सेवन

  1.6.5 भजन कीर्तन

1.7 मीराबाई की विरह वेदना

  1.7.1 पूर्वराग

  1.7.2 मान

  1.7.3 प्रवास

1.8 मीराबाई का काव्य सौन्दर्य

  1.8.1 भाव पक्ष

    1.8.1.1 प्रेम का मिश्रण

1.8.1.2 भक्ति का चित्राण

1.8.1.3 विरह की अनुभूति

1.8.2 कला पक्ष

1.8.2.1 भाषा और शैली

1.8.2.2 छंद एवं अलंकार विधन

1.9 सारांश

1.10 व्याख्या भाग

1.11 कठिन शब्दावली

1.12 स्वयं आकलन प्रश्न

1.13 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1.14 सन्दर्भित पुस्तक

1.15. सात्रिाक प्रश्न

1.1 भूमिका

हिन्दी साहित्य के इतिहास में मीराबाई का सर्वोच्च स्थान है। उन्होंने अपने साहित्य में कृष्ण भक्ति की धरा को चित्रित किया है। उनकी भक्ति में आत्मसर्म्पण की भावना परिलक्षित होती है उन्होंने भगवान श्री कृष्ण के ऊपर अपना सब कुछ निछावर कर दिया है। मीराबाई ने अपने काव्य में भगवान श्रीकृष्ण सर्वोच्च स्थान दिया है। उनका मानन है कि मेरे गिरिध्र ही मुझे भवसागर से पार/मुक्ति प्रदान कर सकते है। मीरा की भगवान श्रीकृष्ण की भक्ति भावना को देखते हुए हिंदी साहित्य में सूरदास को छोड़ दे तो श्रेष्ठ कृष्ण भक्त सि(होती है जिन्होंने भगवान श्री कृष्ण की लीलाओं का चित्राण किया है।

1.2 उद्देश्य

1द्ध मीराबाई के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की जानकारी।

2द्ध मीराबाई के काव्य में वर्णित विषय की जानकारी।

3द्ध मीराबाई द्वारा लिखित साहित्य के कला पक्ष का बोध।

4द्ध मीराबाई किस युग की कवयित्राी है? इस विषय में जानकारी होना।

1.3 मीराबाई का जीवन परिचय

1.3.1 जन्म तथा परिवार

श्री कृष्ण भक्ति की महान कवयित्राी थी। इनका जन्म वि. संवत 1559 में ;सन् 1498 ईúद्ध राजस्थान के राजघराने राठौर वंश जशोदा राव रतन सिंह राठौर के घर में हुआ। मीरा के पिताजी का नाम जशोदा राव रतन सिंह राठौर था। उनकी माता का देहांत बचपन में ही हो गया था। पिताजी रतन सिंह राठौर अध्कितर यु(में व्यस्त रहते थे इसलिए इनका पालन पोषण दादाजी राव दूदा ने किया। राव दूदा मीरा को बचपन से ही ईश्वर भक्ति के भजन कीर्तन सुनाया करते थे। इसलिए मीरा

पर बचपन से ही ईश्वर भक्ति का प्रभाव पड़ता गया। मीरा ने भक्ति भावना की आस्था, तन्मयता, महानता तथा गहराई अपने दादाजी से सीखी जो उनकी भक्ति भावना में दिखाई देती है। मीरा का विवाह मेवाड़ के प्रसि(राजा महाराणा सागा के पुत्रा कुवर भोजराज के साथ हुआ। मीरा की शादी के समय मीरा ने भगवान श्री कृष्ण की मूति को अपने ससुराल ले गई थी। मीरा का वैवाहिक जीवन ज्यादा समय तक नहीं चल सका। कुछ वर्षों के पश्चात मुगलों के साथ यु(में राजा भोजराज की मृत्यु हो गई और मीरा विध्वा हो गई। मुगलों के साथ यु(में मीरा के परिवार के सदस्य धीरे–धीरे मृत्यु को प्राप्त हुए जिससे मीरा अन्दर ही अन्दर बुरी तरह से टूट गई, और वह अपना अध्कितर समय कृष्ण भक्ति में व्यतीत करने लगी। साधु सन्तों के साथ रहकर भगवान श्री कृष्ण के पदों का गायर करती रहती। मीरा का जीवन मातनाओं से भरा रहा है। उनके देवर मीरा को भगवान श्री कृष्ण की भक्ति करने से रोका और उनको अनेकों यातराएं देता रहा। मीरा ने इसका वर्णन कई पदों में किया है–

1द्ध ''बतलावां बोली नहीं राणा जी गया रिसाय।''

2द्ध राणा मो पर कोप्यो रती न राखों मोद।

ले जाती बैकुंठा में यह तो समझयो नहीं सिसोद।''

मीरा साधु संतों के संगति में रहकर श्री कृष्ण की भक्ति करती, जिससे राणा राजघराने में विरोध बढ़ता गया, और उन्हें यातनाएं भी जाने लगीं, जैसे पिटारा में सांप, जहर देना आदि।

मीरा विविध प्रकार की यातनाए दी जा रही थी जिससे परेशान होकर उन्होंने मेवाड़ और मेड़ता को छोड़ दिया। उन्होंने अपनी तीर्थ यात्राा पुष्कर से शुरू की, और फिर वृंदावन होते हुए द्वारिका पहुंची।

1.3.2 मीरा की शिक्षा–दीक्षा

मीरा की प्रारंभिक शिक्षा दीक्षा घर पर ही प्रारंभ हुई। मीरा के दादाजी राव दूदा ने उन्हें अध्ययन की ओर प्रेरित किया। मीरा ने नृत्य और संगीत की शिक्षा भी उन्होंने घर पर ही प्राप्त की। मीरा के पदों से उनके गुरू के संबंध में उल्लेख मिलता हैः

1द्ध मीरा ने गोविन्द मिलाया, गुरू मिलयां रेदास.......

2द्ध गुरू मिलया रैदास जी, दीन्हीं ग्यान की गुटटी.......

इस प्रकार हम कह सकते है कि मीरा के गुरू का नाम रैदास था जिससे उन्होंने शिक्षा–दीक्षा ग्रहण की थी।

1.3.3 मृत्यु

हिंदी के प्रसि(कवयित्री मीराबाई की मृत्यु सन् 1547 ईú में गुजरात के रणछोड़ मंदिर में हुई।

1.4 मीराबाई का साहित्यिक परिचय

मीराबाई ने बचपन से ही भगवान श्री कृष्ण की भक्ति में लीन रहते थे। वे भगवान श्री कृष्ण के गीत गाती थी। उनके अध्कितर गेय पद है। इनकी प्रसि(रचनाएं निम्न प्रकार से हैः–

1द्ध नरसी जी का मायरा

2द्ध राग गोविन्द

3द्ध गीत–गोविन्द की टीमा

4द्ध राग सोरठ के पद

5द्ध मीराबाई की मल्हार

6द्ध राग विहार

7द्ध बगरवा गीत

8द्ध राग गोविन्द

1.5 मीराबाई की साहित्यिक विशेषाएं

मध्यकालीन संतों में लोकप्रिय कवयित्राी मीराबाई श्री भगवान श्री कृष्ण की सच्ची उपासिका थी। वे स्वयं को भगवान श्री कृष्ण की पत्नी के रूप में दिखाती थी। उनके काव्य में भगवान श्री कृष्ण में प्रति आगाध् प्रेम और उनके प्रेम में लोक मर्यादा को तोड़कर स्वतन्त्रा रूप से प्रेम करती है। उन्होंने अपने काव्य में गुजराती, पंजाबी, राजस्थानी तथा ब्रज भाषा का प्रयोग किया है। भगवान कृष्ण के प्रति उनकी भक्ति के गीत आज भी भारतवर्ष में गाए जाते हैं। मीराबाई के काव्य की विशेषता निम्न प्रकार से हैः–

1.5.1 प्रेम भावना

मीराबाई के काव्य का मूल उद्देश्य प्रेमभाव रहा। वह भगवान कृष्ण से सच्चा प्रेम करती हैं वह भगवान को विविध् नामों से पुकारती है और उन पर न्योछावर होने की बात करती है वह कहती हैः–

मैं गिरध्र के घर जाऊं,

गिरध्र म्हारों सांचो प्रीतम, देखत रूप लुभाऊं।

1.5.2 भक्ति भावना

हिंदी भक्त कवियों में मीरा का स्थान सबसे ऊपर है। उन्होंने श्री कृष्ण के प्रति माधुर्य भक्ति भाव भक्ति की है। उन्होंने अपने काव्य में भगवान श्री कृष्ण को अपना स्वमी कहा है और स्वयं को उनकी दासी कहती है :–

भज मण चरण कंवल अवणासी।

जेताई दीसां ध्रण गगन मा, तेताई उठ जासी।।

1.5.3 विरह की अनुभूति

मीराबाई के काव्य में संयोग और वियोग दोनों का वर्णन हुआ है। किन्तु उन्होंने संयोग की अपेक्षा वियोग का अध्कि प्रयोग काव्य में किया है। उनके प्रभू उनसे दूर चले गए है वह अपने गिरध्र को अपने पास देखना चाहती है। इसलिए वह कहती है किः–

दरस विण इखां म्हारा नैण।

सबदां सुणदां मेरी छतियां कांफ मीठो थाऐ बैण।

विरह विथा कांसू री कह्यां येणं करवत ऐण।

कल णां पडता हरि मग जोवां, भयंग छमासी रैण।

वे बिछड्यां म्हा कलपा प्रभूजी, म्हारो गयो सब चैण।

मीटा रे प्रभु कबरे मिलोगां, इख मेटण सुख देण।

1.5.4 प्रकृतिवर्णन

मीराबाई के काव्य में प्रकृति के विविध् रूपों का वर्णन हुआ है। उन्होंने प्रकृति को अध्किांरातः आलम्बन के रूप में प्रयोग किया है।

मेहा बरसबो कर के।

आज तो रमइयो म्हारै घर रे।

नान्ही–नान्ही बूंदन मेहा बरसै, सूखे में वारिश।

या बदला रे तू जल मरि ले आयो।

छोटी–छोटी बूदन बरसन लागीं कोयल सबद सुनायो।।

1.5.5 गीतात्मकता/लयात्मकता

मीरा का अध्कितर साहित्य में लयात्मकता दिखाई पड़ती है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण की भक्ति से सम्बन्धित पदों का गायन किया है। उनके पद राग–रागनियों में रचित है। उनके पदों में राग–पोलु, राग–हमीर, राग–तिलक, राग–कबी, मल्हार आदि का सफल प्रयोग हुआ है।

पग बाध् घूंघर्‌यो नाच्यारी।

लोग कहयां मीरां बावरी, सासु कहयां मुलनासांरी।

1.5.5.1 भाषा का प्रयोग

मीरा के काव्य की भाषा के रूप में ब्रजभाषा का प्रयोग किया है। उन्होंने अपने भाव की अभिव्यक्ति हेतु राजस्थानी, गुजराती, पंजाबी भाषा का भी प्रयोग किया है।

1.6 मीराबाई की भक्ति भावना

हिंदी साहित्य के भक्ति काल की प्रसि(भक्त मीराबाई भगवान श्री कृष्ण की अनन्य भक्त थी। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण को अपना आराध्य देव माना है। मीरा ने भगवान श्री कृष्ण पर अपना सब कुछ निछावर कर दिया और भगवार श्री कृष्ण के गीत गाती फिरती रहती थी। उनके काव्य में माध्ुर्य भक्ति भावना है। मीराबाई ने भगवान श्री कृष्ण को विविध् रूप में प्राप्त किया है। उनकी भक्ति भावना का वर्णन निम्न प्रकार से हैः–

1.6.1 सगुण भक्ति भावना

मीरा के काव्य में भगवान श्री कृष्ण के गुण एवं रूप का वर्णन अध्कि मिलता है। उन्होंने गिरध्र के सगुण रूप का वर्णन किया है। मीरा ने गिरध्र के साकार रूप को अपने पद में चित्रित किया है। वे अनेक सगुण स्वरूप का वर्णन करते हुए कहती हैं कि–

बसो बेरे नैनत में नंद लाल।

मोदिनी मूरति सांवरी सूरति, नैन बने बिसाल।

अध्र सुधरस मुरली रजति, उन बैंजती माल।।

1.6.2 माध्ुर्य भक्ति :

मीरा के काव्य में माधुर्य भक्ति का वर्णन हुआ है उन्होंने भगवान श्री कृष्ण को अपना प्रियतम माना है और उनसे मिले के लिए हृदय में अनेक भाव का वर्णन किया। वह रूप माधुरी मिलन, मिलन कामना विरह की तीव्रता और आत्मसर्म्पण आदि।

ब”यां म्हारे णेणम मा नंदलाल

मोर मुकुट मकराकृत कुंडल अरुण तिलक सोहां भाल।

1.6.3 दाम्पत्य भक्ति

मीरा के काव्य में दाम्पत्य भक्ति भावना का वर्णन हुआ है। मीरां ने भगवान श्री कृष्ण को अपना पति माना है और वह अपने पति से मिलने के लिए मन में तीव्र इचछा रखती है। वह कहती हैं कि–

म्हारे घर होत आज्यों महाराज

णेण विछावा दिवड़ो दास्यूं, सर पर राख्यू विराज।।

1.6.4. पाद सेवन

मीरा के साहित्य में पाद सेवन का वर्णन मिलता है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण के चरणों में आत्म समर्पण किया है। वह कहते है कि हरि चरण ही मेरे लिए सब कुछ है और श्री हरि ही मेरे आराध्य है।

मण थें परस हरि रे चरण।

सुभग शीतल कवंल कोमल, जगत ज्वाला हरण।

1.6.5 भजन कीर्तन

मीरा भगवान श्री कृष्ण की अनन्य भक्त थी। उन्होंने भगवान के चरणों में आत्म सर्म्पण किया है और दिन राज हरि भजन में रत रहती है। वह साधु संतों के साथ रहकर श्री कृष्ण के भजन कीर्तन करती रहती है। वह कहती है कि –

मीरा के प्रभु गिरध्र नागर, भजन वीणा नरफीका।

इस प्रकार हम कह सकते है कि मीराबाई के आराध्य भगवान श्री कृष्ण है। वह भगवान से मिलने के लिए प्रतिदिन इंतजार करती है और साधू संतो के साथ रहकर ईश्वर का भजन कीर्तन करती रहती है।

1.7 मीराबाई की विरह वेदना

विरह हृदय जनित भाव है। विरह में प्रेम सौन्दर्य अध्कि निखरता है। विरह में व्यक्ति के हृदय की वेदना समाहित होती है। प्रेम चन्द्र ने कहा है कि, ‘‘सच्चा प्रेम सयोग में वियोग की मध्ुर वेदना देता है।’’ मीराबाई के काव्य में सच्चे प्रेम की मध्ुर वेदना है। वह अपने प्रेम में सर्वस्व निछावर करती है और विरह की वेदना में तड़पकर अपने प्रेम को निखारती है। विरह में तड़प कर प्रेमी अपने आराध्य से अपने आपको नजदीक महसूस करता है। इसलिए मीरा भगवान श्री कृष्ण को अपने पास महसूर करते है। वह कहती है कि, पिया म्होर नैणां आगारहध्यों विरह में मीरा के प्रेम की गहराई की कसौटी है।

साहित्य में विरह के पूर्वराम, मान, प्रवास और करुणा चार भेद माने गए है। मीराबाई के साहित्य में भी इन चारों साहित्य का वर्णन मिलता है।

1.7.1 पूर्वराग :

मीराबाई के काव्य में पूर्व–राग का वर्णन मिलता है। पूर्व–राग में श्रवण दर्शन आदि से नायक या नायिका का एक दूसरे में अनुरक्त होते है। अनुरक्त के पश्चात् देखने, मिलने आदि की तीव्र आकांक्षा उत्पन्न हो जाती है। हिन्दी काव्य धरा में मीराबाई श्री कृष्ण के साथ जन्म–जन्मान्तरों का संबंध मानती है। भगवान श्री कृष्ण पर सर्वस्व निछावर करती है और श्री कृष्ण से मिलने की अभिलाषा अपने मन में रखती है। वह चाहती है कि उसके नायक उसके सामने ही रहे। मीरा कहती है किः

1. **पिया म्हारे नैणा आगा रहज्यो जी।**

   नैणा आगॉ रहज्यो, म्हाणो, भूल णो जज्यो जी।।

2. **ब"या म्हारे णोणन मां नंन्द लाल।**

अर्थात् मीराबाई भगवान श्री कृष्ण को अपनी आंखों के सामने रखना चाहती हैं। इस अभिलाषा की सन्तुष्टि न होने से मीरा हृदय में विरह–वेदना तीव्र हो उठती है। पूर्वानुराग के प्रथम चरण में विरह आभास होता है।

1.7.2 मान

मान विरह की वह अवस्था है जब नायक–नायिका शारीरिक रूप से एक–दूसरे के समीप होते है पर खढ जाने के कारण मानसिक दृष्टि से एक–दूसरे से दूर होते हैं। हिंदी साहित्य की कवयित्री मीरा के साहित्य में विरह की मान अवस्था का वर्णन नहीं मिलता है।

1.7.3 प्रवास

साहित्य में विरह को सर्वोत्तम प्रकार प्रवास माना गया है। इस अवस्था में नायक–नायिका में से एक बाहर चला जाता है और दूसरा उसके विरह में व्याकुल हो उठता है। साहित्य में विरह के इसी रूप का सबसे अध्कि चित्राण मिलता है। मीरा के पदों में भी इस अवस्था का चित्राण हुआ है। शारीरिक अवस्था के सम्बन्ध् में मीरा लिखती हैं कि, ''पान ज्यूं पीनी पडी रे लोग कहयां पिंडवाय।'' इसके साथ ही मानसिक चिंतन की वेदना कह उठती है, ''प्रभु जी कहां गया नेहड़ा लगाय।''

इस प्रकार मीरा की विरह वेदना पाठक के हृदय दो द्रवीभूत करता है।

1.8 मीराबाई का कारण सौन्दर्य

काव्य अपने सीमित रूप में कविता का पर्याय कहा जाता है। मीरा के काव्य में भक्ति के सगुण रूप के दर्शन होते है। वे भगवान श्री कृष्ण की उपासिका थी। उन्होंने अपने काव्य में भाव के साथ–साथ कला पक्ष को भी महत्व दिया है। उनके काव्य में काव्य के दो पक्ष भाव और कला माने जाते है। भव पक्ष में उन्होंने भगवान श्री कृष्ण के रूप में सौन्दर्य तथा ब्रज का चित्राण किया है। कलापक्ष में उन्होंने सरल, सहज, प्रभावपूर्ण एवं प्रसंगानुकूल राजस्थानी मिश्रित ब्रज भाषा का प्रयोग हुआ है। उनके काव्य सौन्दर्य की विशेषता निम्न प्रकार से हैः–

1.8.1 भाव पक्ष

प्रेम का चित्राण : मीराबाई ने अन्य कवियों की तरह अपने काव्य में भगवान श्री कृष्ण से प्रेम का चित्राण किया है। भगवान श्री कृष्ण को अपना आराध्य मानते हैं मीरा भगवान श्री कृष्ण के सिवाय समाज में कुछ नहीं दिखाई देता चारो तरफ भगवान श्री कृष्ण दिखाई देते है। वह कहती हैं कि :–

''म्हारां री गिरध्र गोपाल दूसरा णां कूयां।

दूसरा णां कूयां साध सकल लोक जूया।।''

1.8.2 भक्ति का चित्राण

मीरा के काव्य में भक्ति का वर्णन मिलता है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण के विविध रूपों का वर्णन किया है। वे भगवान श्री कृष्ण को अपना आराध्यदेव मानते है वे कहती है कि–

''भज मण चरण कवल अवणासी।

जेताई दीसां ध्रण गगन मां तेताई उठ जाती है।''

1.8.3 विरह की अनुभूति

मीरा के काव्य में विरह का वर्णन मिलता है। वे भगवान की श्री कृष्ण से अत्यध्कि प्रेम करती है और उनसे मिलने के लिए व्याकुल होती है। भगवान श्री कृष्ण न मिलने से उनके हृदय में विरह वेदना उठती है और वे अपने हृदय की पीड़ा की व्यक्त करते हुए कहते है कि–

जोगिया से प्रीतकियां दुख होई।

प्रीत कियां सुख का मोरी सजनी, जोगी मित न कोई।

इस प्रकार मीरा ने अपने काव्य में प्रेम की एक निष्ठता, विरहानुभूति, भक्ति तथा रहस्यानुभूति का वर्णन किया है। उनका काव्रूा उनकी एक निष्ठता तथा सर्म्पण का प्रमाण है।

1.8.2.1 भाषा और शैली

मीराबाई ने अपने काव्य में किसी विशेष भाषा का प्रयोग नहीं किया जिस भाषा के शब्द उन्हें पंसद आए उसी शब्द का प्रयोग किया। उन्होंने राजस्थानी, ब्रजभाषा और गुजराती भाषा का प्रयोग किया है।

1.8.2.2 अलंकार, द्वन्द विधन

मीरा के पदों में अलंकारों और छन्द का प्रयोग हुआ है। अलंकार स्वभावतः ही उनके काव्य में आ जाते थे। जीवन के अनुभव और सौन्दर्य की भावना को व्यक्त करने के लिए रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा, अनुप्रास अलंकार अनेक पदों में अनायास ही आ जाते है। मीराबाई के पदों के रूप परिवर्तनशील और संगीतात्मकता दिखाई पड़ती है। उन्होंने सार छन्द, विष्णुपद, दोहा, तारक और कुण्डलन द्वन्द का प्रयोग किया है।

इस प्रकार मीरा की भाषा में प्रवाह, सरलता और मध्ुरता है। उनकी शैली में कोमल अनुभूतियों की अभिव्यक्ति को व्यक्त करने के लिए छंद, अलंकार और मुहावरेदार भाषा का प्रयोग हुआ है।

1.9 सारांश

अतः सारांश रूप में हम कह सकते है कि मीरा के पद हिंदी साहित्य में अपनी अलग पहचान बनाते है। वे उनकी हृदय की गइराईयों से निकलें है, उनका दुख–दर्द स्पष्ट झलकता है। उने काव्य में सम्पर्ण का भाव तथा सच्चा प्रेम भी दिखाई देता है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण की अनन्य भक्त भी उनका स्थान महान सन्तों में रखा जाता है। उन्होंने अपनी अभिव्यक्ति के लिए राजस्थानी, ब्रज तथा खड़ी बोली का प्रयोग किया है, जिससे उनकी सफल भावाभिव्यक्ति हुई है।

1.10 व्याख्या भाग

पद–1

मण थे परस हरि के चरण ।।टेक।।

सुभम शीतल कंवल कोमल, जगत ज्वाला हरिण।।
इस चरण प्रींद परस्यां, इन्द्र पदवी ध्रण।
इस चरण ध्रुव अटल करस्यां, सरण असरण सरण।
इस चरण ब्रह्माण्ड भेटयां, नख सिखां गिरि भरण।
इस चरण कालियां गााथ्यां गोपी लीला करण।
इस चरण गोवरध्न धर्यां गरब मध्वा हरण।
दासी मीरा लाल गिरध्र, अगन तारण तरण।।

पद–3

महारो गोकुल को ब्रजवासी ।।टेक।।
ब्रज लीला लख जण सुख पाा ब्रजवणतां सुख रासी।
णाणाच्चां गांवा ताल वज्यावां पावां आणद हांसी
णन्द जसोदा पुन री प्रकट्यां, प्रभू अविनासी।
पीताम्बर कट उट बैजणतां, कर सोहा री बांसी।
मीरा हे प्रभु गिरध्र नागर, दरसण दीज्यो दासी।।

पद–26

सीसोधे रूठ्यों म्हांरो कोई करलेसी।
म्हें तो गुण गोविन्द का गास्यां, हो माई ।।टेक।।
राणो जी रूठ्यां बांटो देस रखासी।
हरि रूठ्यां कुम्हलास्यां, हो माई।
लोक लाज की करण न मानूं।
नरचै निसाणा ध्रुरास्यां हो माई।
स्याम नाम का झांझ चलास्यां।
भवसागर तर जास्यां हो माई।
मीरा सरण संवल गिरध्र की।
चरण केवल लपटांस्यां, हो माई।।

पद –27

पग बांध् घूंघरया नाच्यारी ।। टेक।।
लोक कहयां मीरां बावरी, सासु कहया कुलनासां री।
विख रो प्यालो राणा भेज्यां, पीवां मीरां हांसां री।
तण मण वाट्यां हरि चरणामां दरसण अमरित प्यास्यां री।
मीरां के प्रभु गिरध्र नागर, थारी सरणां आस्या री।।

प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक 'भक्ति एवं रीति काव्य' में संकलित पद 'मीराबाई' द्वारा रचित कविता में लिया गया है।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद भगवान श्री कृष्ण भक्ति को श्रेष्ठ माना है। वे अपने आराध्य भगवान श्री कृष्ण के चरणों की महिमा का बखान किया है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण पर आत्मसर्म्पण करने की बात कही है।

व्याख्या : 1द्ध मीरा अपने को समझाते हुए कहती है कि हे मन! तू भगवान श्री कृष्ण के चरणों को स्पर्श कर। ये चरण सुन्दर, शीतल तथा कमल के समान कोमल है। ये चरण दुखों एवं कष्टों का हरण करने वाले है। इन चरणों की आराध्ना करके भक्त प्रह्लाद ने इन्द्र की पदवी को प्राप्त किया। इन चरणों का ध्यान करके भक्त ध्रुव को अटल बना दिया। प्रभु के चरण ऐसे लोगों को शरण देते हैं जो निराश्रित हैं। इन्हीं चरणों के कारण संसार का अस्तित्व में आया। प्रभु के चरणों ने कालिया नाग को वश में किया। भगवान ने इन्हीं चरणों से ब्रज में गोपियों के साथ लीलाएं की और गोवर्ध्न पर्वत को धरण किया, जिससे इन्द्र का अहंकार नष्ट हो गया। मीरा कहती है कि मैं तो उन गिरध्र लाल की दासी हूं जो इस संसार रूपी सागर से पार करने वाली नौका के समान हैं।

3द्ध व्याख्या : मीरा कृष्ण की भक्ति में डुबी है। वह कहती है कि हमारे कृष्ण तो ब्रज के निवासी हैं अर्थात् ब्रज में निवास करते हैं। उनकी ब्रज में की हुई लीलाओं को देखकर ब्रज में पुरूष सुख प्राप्त करते हैं और वहां की स्त्रिायां भी खुश होती है। वे नाचती हैं, गाती हैं, ताली बजाती हैं और आनंद की हंसी प्राप्त करती हैं। श्री कृष्ण नंद और यशोदा के पुत्रा के रूप में अवतार लिया है। उनकी कमर पर सुंदर पीले वस्त्रा, गले में सुन्दर वैजयंती के फुलों की माला और हाथ में मुरली सुशोभित रही है। मीरां कहती है उनके तो एकमात्रा प्रभु श्री कृष्ण है। प्रभु अपनी दासी को दर्शन कराकर कृतार्थ करो।

26द्ध मीरा अपनी सखियों से कहती है कि हे सखी! यदि राणा रूठ जाएगा जो वह मेरा कर लेगा। अपना देश अपने पास रखेगे। मैं तो अपने प्रभु श्री कृष्ण के गुण गाऊंगी। मैं यह चिंता नहीं करूगी क्योकि राणा से विगडकर वह मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। यदि भवगान श्री कृष्ण के रूठने जाने, मैं दुखी हो जाऊंगी। उनके रूठ जाने से कुम्हला जाऊंगी। मैं लोकलाज और परिवार की मर्यादा बिल्कुल नहीं मानूंगी। यह सारी बातें मेरे लिए तुच्छ है। हे सखी मैं निर्भय होकर प्रभु श्री कृष्ण के गुणों का गान करूंगी, उनकी भक्ति करूँगी और नगाड़ा आदि को बजाकर उनको स्प्रश करने का प्रयत्न करूँगी। मैं अपने प्रभु का नाम रूपी जहाज को ध्लाकर भव रूपी संसार में तर जाऊंगी। मीरां कहती है गोवर्ध्न को धरण करने वाले प्रभु श्री कृष्ण के चरणों से लिपटकर उन पर समर्पित हो जाऊंगी।

27द्ध मीरा कहती है कि मैं अपने पैरों में भगवान श्री कृष्ण के घुंघरू बांध्कर नाच रही हूं। संसार मुझे पागल कहता है। सास कहती है कि यह कुल की मर्यादा का नाश करने वाली है। राणा ने मीरा को मारने के लिए जहर का प्याला, भेजा, जिसे पीकर मीरां भगवान कृष्ण की कृपा से जीवित रही। मीरा कहती है कि मैंने तो अपना तन–मन भगवान श्री कृष्ण के चरणों में समर्पित कर दिया है और मैंने उनके दर्शन रूपी अमृत पा लिया है। मीरा कहती है कि मुझे गिरिध्र लाल के कारवा भक्ति प्राप्त हुई है। मैं तो उनकी शरण में आई हूं।

1.11 कठिन शब्दावली

मण – मन। परस – स्पर्श। जगत ज्वाला – सांसारिक कष्ट। कालियां णाथ्यां – कालिया नाग को वश में किया। मध्वा – इन्द्र। हरण – तोडा, म्हारी – हमारी। हिवडो – हृदय। देस्यूं प्राण ओकार – अपने प्राण न्योछावर कर दूंगी। कोई कर लेसी – कोई क्या कर लेगा। गास्या – गाऊँगी। हो माई – हे सखी। निसाणा – नगाडा। घुरास्यां – बजाऊँगी। झांझ – नाव। लपटांस्यां – लिपट जाऊँगी। बावरी – बावली। कुल नासां – कुल का नाश करने वाली। पीवां – पीकर।

1.12. स्वयं आकलन प्रश्न

1द्ध मीराबाई का जन्म कब हुआ?

2द्ध मीरा के आराध्य देव कौन थे?

3द्ध मीरां की शादी जिससे हुई?

4द्ध मीरां के पिताजी का नाम बताओं।

5द्ध मीरां के मृत्यु कब हुई?

1.13 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1द्ध 1498, कुडकी गांव राजस्थान।

2द्ध भगवान श्री कृष्ण।

3द्ध मेवाड के राजा राणा सागा के पुत्रा भोजराज से हुई।

4द्ध रतन सिंह राठौर

5द्ध 1547 ईú द्वावरका मैं।

1.14 सन्दर्भि पुस्तक

1द्ध विश्वनाथ त्रिापाइी – मीरा का काव्य

2द्ध डॉ. ओम प्रकाश शर्मा शास्त्राी – मीरांबाई की पदावली

3द्ध प्रो. नारायण शर्मा – मीरा की काव्य कला और जीवनी

4द्ध डॉ मदन लाल शर्मा – मीरां : एक समीक्षात्मक अध्ययन

1.15 सात्रिाक प्रश्न

1द्ध मीरा का जीवन परिचय पर प्रकाश डालिए।

2द्ध मीरा की भक्ति–भावना पर नोट लिखिए।

3द्ध मीरा की साहित्यिक विशेषता लिखिए।

4द्ध मीरा की विरह वेदना का वर्णन कीजिए।

5द्ध भक्तिकाल के कृष्ण भक्त कवियों में मीरा का स्थान।

––––

खण्ड – दो

रसखान और उनका युग

2.1 भूमिका

2.2 उद्देश्य

2.3 रसखान का जीवन परिचय

2.3.1 जन्म तथा परिवार

2.3.2 शिक्षा–दीक्षा

2.3.3 मृत्यु

2.4 रसखान का साहित्यिक परिचय

2.5 रसखान का साहित्यिक विशेषताएं

2.6 रसखान का काव्य सौन्दर्य

2.7 रसखान की भक्ति भावना

2.8 सारांश

2.9 व्याख्या भाग

2.10 कठिन शब्दावली

2.11 स्वयं आकलन प्रश्न

2.12 स्वयं आकलन प्रश्नों के उतर

2.13 सन्दर्भित पुस्तक

2.14 सात्रिाक प्रश्न

2.1 भूमिका

हिन्दी साहित्य के कृष्ण भक्त तथा रीतिकालीन कवियों में कवि रसखान का महत्वपूर्ण स्थान है। ये दिल्ली के एक पठान सरदार थे। इनके काव्य में सूफियों के प्रेम पीर की प्रधनता मिलती है। रसखान ने प्रेमपीर की कृष्ण को मूर्त अवलम्बन बना लिया है। इनके विषय में प्रचलित किंवदन्तियों से इतना निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रसखान एक रसिक जीवन थे और उनका लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम में बदल गया था। आचार्य चन्द्रबली पांडेय जी ने उनकी भक्ति के सम्बन्ध में लिखा है कि रसखान नारद भक्त थे, बल्लभी नह, कई विद्वानों का मत हे कि ये बड़े भारी कृष्णभक्त और गोस्वामी बिट्ठलनाथ जी के कृपापात्रा शिष्य थे। ''दो सौ बावन वैष्णवों की वार्ता'' में इनका वृतांत आया है।

2.2 उद्देश्य

;1द्ध विधर्थियों को रसखान के जीवन से परिचित करवाना।

;2द्ध भक्तिकाल के सगुण धरा के कृष्णभक्ति शाखा से अवगत करवाना।

;3द्ध रसखान के काव्य से परिचय करवाना

;4द्ध रसखान की भक्तिभावना तथा उनकी काव्यशैली की अभिव्यक्ति।

;5द्ध कृष्ण काव्य के रूप में सौंदर्य का चित्राण।

2.3 रसखान का जीवन परिचय

रसखान के जन्म–समय, शिक्षा–दीक्षा, कार्य–व्यवसाय, निध्न–काल आदि के संबंध् में कोई प्रामाणिक साक्ष्य अभी तक उपलब्ध् नहीं है। फिर भी, विद्वानों ने उनकी रचनाओं से कतिपय संकेत सूत्रा ग्रहण करके उनके जीवनवृत के संबंध् में महत्वपूर्ण निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। इन्होंने ''प्रेम वाटिका'' में पअने आपको शाही खानदान का कहा है–

देखी गदर हित साहिबी, दिल्ली नगर मसान।

छिनहिं बादसा बंस की, ठसक छाँड़ि रसखान।।

संभव है पठान बादशाहों की कुल परंपरा से इनका संबंध् रहा हो। मुगल–सम्राट हुमायुं ने दिल्ली के सूखंशीय पठान शासकों से अपना खोया हुआ शासनध्किार पुनः हस्तागत किया था। इस अवसर पर भयंकर नरसंहार और विध्वंस होना स्वाभाविक था और कवि–प्रकृति के कोमल हृदय रसखान द्वारा उस 'गदर' के ताडंव रूप को देखकर विरक्त हो जाना भी अस्वाभाविक नहीं। कवि ने जिस 'बादशाह–वंश' की 'ठसक' का त्याग किया, वह वही पठान ;सूरद्ध–वंश प्रतीत होता है।

2.3.1 जन्म तथा परिवार

रसखान के जन्म के संबंध् में विद्वानों में काफी मतभेद है। कुछ विद्वानों ने इनका जन्म संवत् 1615 ईú माना है तथा कुछ विद्वानों ने संवत 1630 ईú माना है। स्वयं रसखान के अनुसार गदर के कारण दिल्ली श्मशान बन चुकी थी, तब दिल्ली छोड़कर ब्रज ;मथुराद्ध चले गए। गदर सन् 1613 ईú में हुआ था और ये गदर के समय व्यस्क थे, इसलिए कई विद्वान इनका जन्म संवत् 1590 ईú में हुआ था। अन्य मत के अनुसार रसखान अकबर के समकालीन थे और अकबर का शासनकाल 1556–1605 है। अतः इनका जन्म 1590 ईú मानना ही उचित होगा। इनके जन्म स्थान को लेकर भी विभिन्न मत प्रकट किए गए है। कुछ लोग इनका जन्म स्थान 'पिहानी' ;दिल्ली के समीपद्ध मानते है परन्तु इनके काव्य में 'दिल्ली' शब्द का एक ही बार प्रयोग हुआ है। गदर के बाद उनका जीवन मथुरा में ही बीता। परन्तु 'शिवसिंह सरोज' के अनुसार रसखान की जन्म भूमि 'पिहानी' जिला हरदोई ;उत्तर प्रदेशद्ध मानना ज्यादा उचित है क्योंकि हरदोई जनपद में निर्मित एक प्रेक्षाग्रह का नाम 'रसखान प्रेक्षाग्रह' है। पिहानी और बिलग्राम ऐसी जगह है जहां हिन्दी के बड़े–बड़े और उच्चकोटि के मुसलमान कवि पैदा हुए है।

रसखान के जन्म स्थान और जन्म काल की तरह इनके नामकरण के संबंध् में विभिन्न मत प्रस्तुत हुए है। परन्तु रसखान का वास्तविक नाम सैÕयद इब्राहिम था। खान इनकी उपाध् थी। नवलगढ़ के राजकुमार संग्राम सिंह द्वारा प्राप्त रसखान के चित्रा पर नागरीलिपि के साथ–साथ फारसी

लिपि में भी एक स्थान पर 'रसखान' और दूसरे स्थान पर 'रसखाँ' ही लिखा मिलता है। अतः यह कहा जा सकता है कि जिस प्रकार फारसी कवि अपना नाम संक्षिप्त रखते थे उसी आधर पर रसखान ने अपना नाम बदलकर कविता लिखने की परम्परा को आगे बढ़ाया।

2.3.2 शिक्षा–दीक्षा

रसखान की पारिवारिक पृष्ठभूमि अज्ञात है। परन्तु कहा जाता है कि इनके पिताजी एक जागीरदार थे। इसलिए इनका पालन–पोषण बड़े लाड़–प्यार से हुआ माना जाता है। एक साध्न–सम्पन्न परिवार से जन्म लेने के कारण इनकी शिक्षा अच्छी तथा उच्चकोटि की हुई थी। रसखान को फारसी, संस्कृत तथा हिन्दी का अच्छा–खासा ज्ञान था। इन्होंने ''श्रीमद्भगवत'' का अनुवाद फारसी और हिन्दी में किया था। अतः यह संस्कृत, फारसी और हिन्दी के अच्छे जानकार थे। ब्रज के ठाकुर नटवर नागर नंद किशोर भगवान श्री कृष्ण पर इनकी अगाथ श्र(ा थी।

2.3.3 मृत्यु

डॉU नगेन्द्र के अनुसार रसखान की मृत्यु 148 में वृन्दावन में हुई थी। मथुरा जिले के महावन में इनकी समाध् िबनाई गई है।

2.4 रसखान की साहित्यिक परिचय

रसखान का संपूर्ण कृतित्व अभी तक प्राप्त नहीं है। परन्तु रसखान की प्रमुखतः चार रचनाएं प्रामाणिक मानी जा सकती है।

2.4.1 सुजान रसखान

यह स्फुट छंदों का संग्रह हैं, जिसमें 181 सवैये, 17 कवित्त, 12 दोहे तथा 4 सोरठे हैं। इन छंदों का मूल उद्देश्य भक्ति, प्रेम, राध–कृष्ण की रूप–माध्ुरी, वंशी–मोहिनी एवं कृष्ण–लीला संबंधी अन्य सरस प्रसंग हैं।

2.4.2 प्रेमवाटिका

इसके अंतर्गत कवि ने राध–कृष्ण को प्रेमोधन के मालिन–माली मान कर प्रेम के गूढ़ तत्त्व का सूक्ष्म निरूपण किया है। यह 53 दोहों की लघु कृति है।

2.4.3 दानलीला

यह केवल 11 छंदों का छोटा–सा पद्यप्रबंध् हैं, जिसमें कवि ने प्रसि(पौराणिक प्रसंग को राध–कृष्ण संवाद के रूप में चित्रित किया है।

2.4.4 अष्टयाम :

'अष्टयाम' में संकलित कई दोहों के अंतर्गत श्री कृष्ण के प्रातः जागरण से रात्रिशयन–पर्यंत उनकी दिनचर्या एवं विभिन्न क्रीडाओं का वर्णन है।

2.5 रसखान की साहित्यिक विशेषताएं

प्रेमतत्त्व के निरूपण में रसखान को अद्भुत सफलता प्राप्त हुई है। उनका प्रेम–वर्णन बड़ा सूक्ष्म, व्यापक एवं विशद् है। उनके काव्य का प्रमुख रस शृंगार है, जिसके आलंबन श्री कृष्ण है। उनके रूप पर मुग्ध् राध एवं गोपिकाओं की मनः स्थिति के चित्राण के माध्यम से रसखान ने शृंगार की मध्ुर अभिव्यंजना की है। शृंगार के उपरांत रसखान–काव्य में चित्रित दूसरा प्रमुख रस वात्सल्य है। श्री कृषण के बाल–रूप की माध्ुरी का वर्णन उन्होंने यद्यपि गिने–चुने छंदों में ही किया है, पर उनकी

काव्यात्मक गरिमा सूर और तुलसी के बाल–वर्णन की समता करने में भलीभांति सक्षम है। रसखान के साहित्यिक विशेषताएं निम्न हैं :–

2.5.1 निश्चल, निःस्वार्थ एवं प्रगाढ़ प्रेम

रसखान की साहित्यिक रचनाओं में श्री कृष्ण के प्रति निश्चल, निस्वार्थ एवं प्रगाढ प्रेम का निरूपण हुआ है। इनका प्रेम इतना प्रगाढ़ है कि इनके जीवन का एक पल भी श्री कृष्ण के बिना अस्वीकार है। इस प्रकार ये प्रभूभक्ति के माध्यम से प्रेम को नए रूप में गढ़ते नजर आते हैं। 'प्रेमवाटिका' नामक ग्रंथ में प्रेम के दर्शन की भांति स्पष्ट होते है। 'प्रेमवाटिका' में वे लिखते है–

''प्रेम प्रेम सब कोउ कहत, प्रेम न जानत कोई।

जो जन प्रेम तौ, मरै जगत क्यों रोई।।''

2.5.2 कृष्ण के रूप–सौंदर्य का चित्राण

रसखान ने भगवान कृष्ण ने अपनी अनन्य भक्ति के कारण भगवान श्री कृष्ण के सौंदर्य से तीनों लोगों के सौंदर्य को पराजित करने वाले नायक के रूप चित्रित किया है। यही कारण है कि इनके कवित्त–सवैयों में भगवान के अनुपम अप्रतिम एवं अलौकिक रूप–सौंदर्य का चित्राण इस प्रकार देखा जा सकता है –

''कल कानन–कुंडल, सिर मोरपखा, उर पै बनमाल विराजित है।

मुरली कर मैं अध्रा मुसकानि, तरंग महाछवि छाजति है।।''

2.5.3 अनन्य भाव से भक्ति

रसखान के काव्य में कृष्ण भक्ति को बहुत महत्व प्रदान किया गया है। इन्हें कृष्ण से जुड़ी प्रत्येक वस्तु से अगाध प्रेम है। जिस कारण उन्हें ब्रज क्षेत्रा, यमुनातट, वहां के वन और बाग, पशु–पक्षी, नदी–पर्वत आदि में प्रेममय महसूस करते है और श्री कृष्ण के बिना स्वयं को अधुरा महसूस करते हैं। इनमें कृष्ण भक्ति में गहनता तथा तन्मयता की अधिकता है। ये अपने मन वचन और निरंतर कृष्ण भक्ति की अलख जगाए रहते हैं। वे लिखते हैं–

''बैन वही उनको गुनगाई औ कान वही उन बैन सौं सानी।

हाथ वही उन गात सरै अरू पाइ वही जु वही अनुजानी।।

जान वही उन प्राण के संग और मान वही जु करै मनमानी।

त्यौं रसखानि वही रसखानि जुहै रसखानि सो है रसखानि।

2.5.4 बालकृष्ण लीलाओं का वर्णन

रसखान के काव्य में बाल कृष्ण की लीलाओं का वर्णन भी देखने को मिलता है। हालांकि इनका वर्णन सूर और तुलसी के बाल लीलाओं के समान नहीं है परन्तु जो वर्णन इनके काव्य में है उसमें श्रीकृष्ण की छवि सजीव मान पड़ती है और ऐसा प्रतीत है कि श्री कृष्ण उनके समक्ष खेलता अपनी लीलाएं करता नजर आता है। एक सवैये में रसखान लिखते हैं :–

''धूरि भरे अति शोभित स्यामजू, तैसी बनी सिर सुंदर चोटी।

खेलत खात फिरैं अंगना, पग पैजनियां कटि पीरी कछोटी।।

वा छवि को 'रसखानि' बिलोकत, बारत काम कला निज कोटी।

काग के भाग बड़ सजनी, हरि हाथ सौ ले गयौ माखान रोटी।।

2.5.5 होली वर्णन

रसखान ने अपने काव्य में कृष्ण को गोपियों के साथ होली खेलते हुए दिखाया गया है, जिसमें श्री कृष्ण गोपियों को भिगो देते हैं। गोपियां फाल्गुन के समय श्री कृष्ण के अवगुणों की चर्चा करती हुई कहती है कि कृष्ण ने होली खेलकर हम में काम–वासना जागृत कर दी है। पिचकारी से हमें पूरी तरह से भिगा दिया है। जिससे हमारा गले का हार भी टूट गया है। जिसका वर्णन इस प्रकार से है–

''आवत लाल गुलाल लिए भग सूने मिली इक नार नवीनी।

त्यौं रसखानि लगाइ हियें मौज कियौ मन माहिं अधेनी।

सारी फटी सुकुमारी हटी अंगिया दर की सरकी रगभीनी।

गाल गुलाल लगाइ लगाइ कै अंक रिझाइ बिदा करि दीनी।।''

2.5.6 श्रीकृष्ण की प्रेमाधीनता का वर्णन

कवि रसखान ने अपने काव्य में अपनी अनन्य कृष्ण भक्ति का ही वर्णन नहीं किया बल्कि स्पष्ट किया है कि भगवान कृष्ण भक्त–वत्सल है। वे अपने भक्त के प्रेम के अधीन रहते हैं। उन्हें पाने के लिए किसी विध्–िविधन या आडंबर करने की जरूरत नहीं बल्कि वो तो अपने भक्तों और प्रेमीजनों के सदैव निकट व हृदय में रहते हैं–

''ब्रह्म मैं ढूँढ्यो पुरान गानन वेद–रिचा सुनि चौगुन चायन।

देख्यौ सुन्यौ कबहूं न कितूँ, वह कैसे सरूप औ कैसे सुभायन।

टेरत हेरत हारि पर्‌यौ रसखानि बतायौ न लोग लुगायन।

देखौ–दुरौ वह कुंज–कुटीर में बैठ्‌यो पलोटत राध्किा–पायन।।

रसखान प्रेम और शृंगार के कवि हैं। उन्होंने अपने विषय के अनुरूप सवैया, कवित एवं दोहा छंद को अपना कर काव्य रचना के माध्यम के रूप में चुना। वे भक्त और कवि से पहले एक सहृदय भावुक व्यक्ति है। उनका अंतर प्रेमताप की उष्णता से विगलित होकर मानो विविध् भाव सारणियों के रूप में उमड़ पड़ा है। उनकी इस ऐकांतिक प्रेममयी उमंग के उनके काव्य को सममुच 'रस की खान' बना दिया है। उनके काव्य की मुख्य विशेषता यह है कि उनका प्रेम–निरूपण सूफियों की प्रेम–प(ति का अनुकरण न होकर स्वच्छंद है और उनका शृंगार चित्राण किसी 'रिति' विशेष में सीमित नहीं है। उनके काव्य में उनके स्वच्छंद मन के सहज उद्‌गार हैं। इसीलिए उन्हें स्वच्छंद काव्यधरा का प्रवर्त्तक भी कहा जाता है।

2.6 रसखान का काव्य सौन्दर्य

भक्तिकाल के कृष्ण भक्त कवि रसखान प्रेम और सौन्दर्य के कवि थे। उन्होंने गोपियों के माध्यम से प्रेम का चित्राण किया है। उनके काव्य में भगवान श्री कृष्ण के विविध् रूपों का चित्राण हुआ है। काव्य में गोपियों की सर्मपण की भावना का भी वर्णन मिलता है। रसखान के काव्य में आन्तरिक तथा बाहरी सौन्दर्य का वर्णन मिलता है। साहित्यिक दृष्टि में हम इस भावनात्मक तथा कलात्मक सौन्दर्य के वर्णन रूप में जानते है। भावनात्मक सौन्दर्य कथात्मक सौन्दर्य कहलाता है तथा कलात्मक सौन्दर्य के अन्तर्गत कथ्य को व्यक्त करने के लिए विविध् यंत्रा जैसे भाषा, अलंकार, छन्द तथा शैली का प्रयोग हुआ है।

1. **भावनात्मक सौन्दर्य ;भाव पक्षद्ध :** रसखान ने अपने काव्य में भगवान श्री कृष्ण की कथा को मुख्य आधर बनाया है। उनके काव्य में भगवान के प्रति गोपियों का प्रेम तथा भगवान का भक्त के प्रति प्रेम का वर्णन किया गया है जिसका वर्णन निम्नलिखित प्रकार से है :–

1द्ध श्रृंगार का प्रयोग : रसखान के काव्य में श्रृंगार के दोनो रूपों के दर्शन होते हैं। उन्होंने अपने काव्य में अध्कितर नायक–नायिका के हास परिहास, मिलन एवं रूप सौन्दर्य का वर्णन मिलता है। रसखान ने नायक और नायिका के नख–शिख का वर्णन किया है। श्रृंगार के सयोग के साथ–साथ वियोग का भी वर्णन मिलता है।

वियोग श्रृंगार में उन्होंने नायिका के पूर्वराग, मान, करूण तथा प्रवास चारों स्थितियां का चिक्र किया है।

2द्ध आत्मसमर्पण की भावना का चित्राण : रसखान ने अपने काव्य में गोपियों का भगवान श्री कृष्ण के चरणों में समर्पण की भावना का चित्राण किया है। गोपियों का मानना है कि संसार में भगवान की भक्ति के बिना कुछ नहीं है इस पर रसखान कहते हैं कि–

''मानुष हों तौ वही रसखानि बसौ ब्रज गोकुल गांव के ग्वारन।''

अर्थात् यदि मुझे मनुष्य जन्म मिले तो ब्रज में ग्वालों के बीच होना चाहिए। रसखान भगवान श्री कृष्ण को संसार में मुक्ति का द्वार मानते है।

3द्ध प्रेम का चित्राण : रसखान ने अपने काव्य में भगवान श्री कृष्ण को नायक के रूप में चित्रित करते है और वे अपने काव्य में गोपियों का भगवान श्री कृष्ण के प्रति प्रेम तथा राध का अपने नायक के प्रति प्रेम तथा समर्पण के भाव को उजगृत किया है। वे कहते हैं कि–

''बाँकी उड़िया अखियां बडरारे कपोलनि बोलनि कोकिल बानी।

सुन्दर हार सुधनिध् सो मुख मूरति रंग सुधरस–सानी।

ऐसी नवेली ने देखे बीथिन मैं रसखानि मनोहर रूप लुभानी।।''

4द्ध रूप सौन्दर्य का चित्राण : रसखान ने अपने काव्य में भगवान श्री कृष्ण के रूप सौन्दर्य का वर्णन अपने काव्य में किया है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण की मन–मोहक मूरत का वर्णन किया है। रसखान कहते है कि मैं भगवान की भक्ति पर सारे संसार का राज्य त्याग दू। वे भगवान के नख–शिख का वर्णन करते हुए उनके मुख मण्डल का वर्णन करते हुए कहते है कि:–

''मोटपखा सिर कानन मुण्डल कुंतल सो छवि गंडनि छाई।

बंक मिसाल रसाल विलोचन हैं दुख मौचन मोहन माई।।

आलि नवीन यह ध्न सो तन पीत घर ज्यौं पठा बनि आई।

हो रसखानि जकी सी रही होना ध्लाई ठगौरी सी लाई।''

भगवान श्री कृष्ण के अभामण्डल का वर्णन करते हुए कहते है कि उनका आभामण्डल कुंडल, भोरपंखा और मुकुट से अत्यध्कि शोभामान हो रहा है। उनके शरीर पर पीले वस्त्रा को देखकर ठन पर जाइ–सा हो गया है।

कलापक्ष ;बाह्य पक्षद्ध : काव्य की अभिव्यक्ति के लिए रसखान ने अपने साहित्य में अनेकों भाविक प्रयोग किए है। भगवान श्री कृष्ण के प्रति अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति हेतु उन्होंने छन्द, अलंकार, रस तथा शैली का प्रयोग किया है। उनके काव्य में प्रयुक्त कलापक्ष निम्न प्रकार से है–

1द्ध **भाषा का प्रयोग :** रसखान ने अपने भाव कि अभिव्यक्ति के लिए ब्रज भाषा का प्रयोग किया है। जब रसखान का उदय काव्य में हुआ तब साहित्य तथा श्री कृष्ण काव्य के लिए ब्रज भाषा अध्कि प्रचलित थी। ठस समय की प्रचलित ब्रज–भाषा को उन्होंने अपने काव्य की भाषा का चित्राण किया।

2द्ध **अलंकारों का प्रयोग :** काव्य की शोभा तथा भगवान श्री कृष्ण के रूप सौन्दर्य को व्यक्त करने के लिए रसखान ने अपने काव्य में विविध् अलंकारों का प्रयोग किया है। अनुप्रास अलंकार : सेस, गनेस, महेस, दिनेस, सुरेसहु, जाहि निरंतर आवे।

उपमा अलंकार : 'तिरछी बरघी सम भारत है।'

3द्ध **छंद योजना :** रसखान ने अपनी अभिव्यक्ति को प्रभावशाली ढंग से व्यक्त करने के लिए शब्द शक्तियों का प्रयोग किया है।

4द्ध **शैली का प्रयोग :** रसखान ने भावात्मक, आत्मकयात्मक, वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है।

5द्ध **मुहावरे और लोकोक्तियों का प्रयोग :** रसखान के काव्य में लोकोक्ति और मुहावरे का भी प्रयोग हुआ है।

मुहावरे :

1द्ध कान्हं भए बस बांसुरी।

2द्ध गाल बजावत।

3द्ध पसारत हाथ।

लोकोक्ति :

1द्ध नेम कहा जब प्रेम कियो।

2द्ध मोल कला के लला न बिकैहों।

इस प्रकार रसखान के काव्य में भाव तथा कला पक्ष की सफल अभिव्यक्ति हुई है। उन्होंने अपने विविध् भावों को व्यक्त करने के लिए भाषा पर आवश्यक प्रयोग किए है।

2.7 रसखान की भक्ति भावना

हिंदी साहिता में कृष्ण भक्त कवियों में सम्प्रदाय निरपेक्ष कवि रसखान का महत्त्वपूर्ण ध्यान था। उन्होंने अपने काव्य भगवान श्री को अराध्य देव माना है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण को अपने काव्य में कृष्ण को माली के रूप में वर्णन किया है। उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से श्रवण, कीर्तन, स्मरण, अर्चना, पाद–सेवन, साध् एवं दास्य भक्ति का वर्णन किया है। उनका मानना है कि ईश्वर के चरणों की सेवा और कीर्तन के पश्चात ही मानव/मनुष्य के ऊपर भगवान ही दया बनी रहती है और मनुष्य भव–सागर से मुक्ति प्राप्त करता है। रसखान ने काव्य में ईश्वर भक्ति के विविध् रूपों का चित्राण कर उनकी भक्ति का वर्णन किया हैः–

1द्ध **सगुण और निर्गुण भक्ति भावना :** हिंदी साहित्य में दो तरह से भक्ति का विकास हुआ है जिसमें सगुण भक्ति भावना और निर्गुण भक्ति भावना की है। रसखान ने अपने काव्य में सगुण और निर्गुण भक्ति दोनों का अपनाया। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण की महिमा का गान किया है और उनके विविध रूपों को अपने काव्य में वर्णित किया है। वे कहते है कि –

''बाँकी उड़ी अंखियां बडरारे कपोलनि बोलनि कोकिल बानी।

सुन्दर हार सुध–निधि सो, मुख मूरति रंग सुधरस–सानीत।

ऐसी नवेली दे देये कहूँ ब्रजराज लता अति ही सुख दावी।

डोलती है वन बीथिन में रसखानि मनोहर रूप लुभावनी।।''

रसखान ने भगवान श्री कृष्ण के रूप सौन्दर्य का वर्णन किया है वे कहते है कि उनका सौन्दर्य अदभूत है। जो मनुष्य इनके रूप का दर्शन एक बार कर लेता है तो वह गली–गली उनको दूढ़ंता है।

2द्ध माधुर्य भक्ति भावना : रसखान ने अपने काव्य में माधुर्य भक्ति भावना का चित्राण भी किया है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण और राध सौन्दर्य का चित्राण किया है। रसखान ने अपने काव्य में प्रेम आत्मसमर्पण भक्ति का वर्णन किया है। उनका मानना है कि जब तक भक्त अपने आराध्य के प्रति पूर्ण विश्वास प्रकट न करें तब तक उसे युक्ति नहीं मिलती अर्थात् उसका भगवान से मिलन नहीं होता। वे कहते है कि :

सरस नेह लवलीन नव, द्वै सुजानि रसखानि।

तकि आस विसास सों पगे प्रान रसखानि।

3द्ध प्रेम भक्ति : रसखान के काव्य में प्रेम भक्ति का वर्णन भी दिखाई पड़ता है। प्रेम भक्ति और घनिष्ठता के कारण रसखान श्री कृष्ण को अपना आराध्य मानते है। रसखान भगवान श्री कृष्ण से सम्बन्धित वस्तु से निकटता चाहते है। वे चाहते है कि उनका जन्म ब्रज में हो। यदि उनका जन्म पशु के रूप में हो तो गोकुल ही गाय के रूप में हो ताकि वह भगवान श्री कृष्ण से हमेशा नजदिकियां बनाएं रखें। वे कहते है कि–

''मानुष हों तौ वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँवन के ग्वारन।

जो पसु हौ तो कहा बसु मेरो चरौं नित नन्द की धेनु मंझारन।''

अर्थात् रसखान की भक्ति भावना में निष्ठा भाव एवं विशु(प्रेम भाव को अभिव्यक्त किया है।

4द्ध भक्ति की महिमा : रसखान ने अपनी भक्ति को श्रेष्ठ माना है। वह ज्ञान के आधर उन्होंने वेदो, पुराणों का निचोड़ प्रेम माना है। उन्होंने भक्ति को मोक्ष का साध्न माना है। वे कहते है कि–

''स्त्राुति पुराना आगम स्मृतिहि, प्रेम सबहि को सार।

प्रेम बिना नाहि उपज हिय, प्रेम–बीज–अंकुवार।''

अर्थात् प्रेम ही भक्ति तक पहुंचने का मार्ग है और भक्ति से ही मनुष्य को मुक्ति का मार्ग प्राप्त होता है।

5द्ध भक्ति का स्वरूप : भक्ति शास्त्रा के आचार्यों के अनुसार भक्ति को प्रेम–स्वरूप बतलाया है। रसखान भी परम प्रेम को भक्ति मानते हैं। प्रेम की अतिशयता और अनंयता का प्रतिपादन करने हेतु भक्तों ने चातक को आदर्श स्थापित किया है। रसखन कहते है किः

"बिमल सरल रसखानि मिलि मई सकल रसखानि।

सोई नव रसखानि कौं, चित चातक रसखानि।।"

इस प्रकार रसखान की भक्ति भावना में प्रेम समर्पण के भाव को श्रेष्ठ माना है। प्रेम और समर्पण के भाव से ही मनुष्य ईश्वर के समीप जाकर उसे प्राप्त करते है। रसखान ने प्रेम को श्रेष्ठ माना है और प्रेम के माध्यम से ही भक्ति का मार्ग प्रशस्त होता है।

2.8 सारांश

हिन्दी साहित्य में कृष्ण भक्त कवियों में रसखान का स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने भगवान श्री कृष्ण की विविध प्रकार की लीलाओं का वर्णन अपने साहित्य में किया है। भगवान श्री कृष्ण को अपना आराध्य के रूप में दे देखते थे। और उन्हें एक नायक तथा राध को नायिका के रूप में चित्रित कर अपने काव्य में प्रेम की इस धरा को प्रवाहित किया। रसखान ने भगवान श्री कृष्ण को प्रेम के माध्यम से प्राप्त किया जाता है इसलिए उन्होंने अपने काव्य में प्रेम का अध्यध्कि चित्राण किया है। रसखान भगवान के भक्ति प्रेम में मग्न रहकर अपने आपको समर्पित करते है।

2.9 व्याख्या भाग

1. मानुष्य हो तो वही रसखानि बसौं ब्रज गोकुल गाँवन के ग्वारन

जो पसु हौ तो कहा बसु मेरो चरौं नित नन्द की ध्नु मझारन।।

पाइन हौं तो वही गिरि को जो ध्र्यो कर छत्रा पुरन्दर धरण।

जो खग हौं बसेरो करौं मिल कालिन्दी–कुल–कदम्ब की डारन।।

प्रसंग : प्रस्तुत पद्यांश हमारी पाठ्य पुस्तक भक्ति एवं रीति काव्य में संकलित कवि रसखान द्वारा रचित सवैय में से लिया गया है।

संन्दर्भ : पद में कवि ने ब्रजधम के प्रति अपने मन के प्रेम को अभिव्यक्ति किया है। वह भगवान श्री कृष्ण को प्राप्त करना चाहते है चाहे वह किसी भी रूप में प्राप्त हो।

व्याख्या :– कवि कहता है कि यदि वे अगले जन्म में इस ध्रती पर जन्म ले तो वह ब्रज में जन्म लेना चाहते है। तौ वह गोकुल में ग्वालों के बीच निसास करें। यदि वे पशु के रूप में जन्म ले तो वह नन्दबाबा की गायों के रूप में जन्म चाहते है। यदि व पत्थर रूप में जन्म ले तो गोवर्ध्न पर्वत का पत्थर बने जिससे कृष्ण ने इन्द्र का घमण्ड चूर किया था। गोवर्ध्न पर्वत का भगवान ने अपनी ऊँगली के उपर उठाकर छाते का रूप धरण किया और गोकुलवासियों की रक्षा की। यदि वह पक्षी के रूप में जन्म ले तो उनका बसेरा यमुना नदी के किनारे कदम्ब के पेड़ की डालियों पर हो जहां पर भगवान कृष्ण के साथ मिलन हो।

विशेष :

1द्ध भगवान श्री कृष्ण के प्रति अपनी आगाथ श्र(ा की अभिव्यक्ति।

2द्ध भाषा सरल, सहज और प्रभावमयी है।

3द्ध माध्ुर्य गुण की प्रधनता।

4द्ध अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।

5द्ध ब्रज भाषा का प्रयोग।

2. **बैन वही उनको गुन गाई ओ कान वही उन बेन सो सानी।**
हाथ वही उन गात सरै अरू पाइ वही जु वही अनुजानी।
जान वही उन आन के संग औ गान वही जु करें मनमानी
त्यौं रसखान वही रसखानि जु है रसखानि सों है रसखानी।।

प्रसंग : पूर्ववत्

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद में रसखान की भगवान श्री कृष्ण के प्रति आगाथ श्र(ा को व्यक्त किया है। वे भगवान की भक्ति में अपने शरीर के अंगों को निवेदित करते हुए कहते है।

व्याख्या : रसखान कहते है कि वही वाणी सार्थक है जो भगवान कृष्ण के गुणों का गान करती है। वही कान सार्थक है जो कृष्ण की वाणी से युक्त हो। वही हाथ सार्थक जो भगवान कृष्ण चरणों को स्पर्श करें। वही चरण सार्थक है जो कृष्ण का अनुगमन करते है। वे ही प्राण सार्थक हैं जो भगवान कृष्ण के साथ रहते है। वही मन सार्थक है जो भगवान कृष्ण का चिंतन करता है और उनसे प्रेम करता है।

कवि रसखान कहते है कि भगवान कृष्ण तो आनंद का भण्डार है जो अपने भक्तों से प्रेम करते है। वे भक्तों का नाराज नहीं करते। उनसे नाता जोड़कर सुख प्राप्त होता हैं।

विशेष :

1द्ध सम्पर्ण का भाव।

2द्ध अनुप्रास अलंकार का चित्राण– गुन–गाई, सो–सानी आदि।

3द्ध सरल, सहज व प्रवाहमयी भाषा का प्रयोग।

4द्ध माधु्र्य गुण का प्रभाव।

5द्ध ब्रजभाषा का प्रयोग।

3. **कहा करै रसखानि को, को चुगुल लबार।**
जो पै शखनहार है, माखन–चाखतहार।

प्रसंग : पूर्ववत्

सन्दर्भ : प्रस्तुत दोहे में भक्ति और प्रेम का चित्राण किया है।

व्याख्या : कवि कहता है कि जिसका रक्षक भगवान कृष्ण है उसका कोई कुछ नहीं बिगाड़ नहीं सकता। मुझे अपने आराध्य पर अटल विश्वास है। मैं उनका संरक्षण पाकर स्वयं को हर संकट से सुरक्षित समझता हूं।

विशेष :

1द्ध भगवान श्री कृष्णर के प्रति आगाध विश्वास का चित्राण

2द्ध माधु्र्य गुण का वर्णन।

3द्ध सरल, सरज भाषा का प्रयोग।

4. बिमल सरल रसखानि, भई सकल रसखानि।

सोई नव रसखानि को, चित चालक रसखानि।।

प्रसंग पूर्ववत।

सन्दर्भ :प्रस्तुत दोहे में रसखान ने गोपियों का भगवान श्री कृष्ण पर सम्पर्ण के भाव को स्पष्ट किया है।

व्याख्या : रसखान कहते है कि गोपियों ह्दय से शु(और सरलता से कृष्ण से मिलकर उसी रूप में हो गई है। मेरा मन भी आनन्द के भण्डार कृष्ण पर लगा हुआ है उसी तरह का हो गया है।

विशेष

1द्ध आदर्श प्रेम का चित्राण।

2द्ध सरल भाषा का प्रयोग।

3द्ध माधुर्य भाव का चित्राण।

5. सरस देह लवलीन नव, मै सुजानि रसखानि।

ताके आस विसास सों पगे प्रान रसखानि।।

प्रसंग : पूर्ववत्।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद में रसखान ने राध और श्री कृष्ण के प्रति आदर्श प्रेम का चित्राण किया है। इसमें भगवान कृष्ण और राध के मिलन का भी चित्राण मिलता है।

व्याख्या : रसखान कहते है कि जो राध और भगवान श्री कृष्ण के मिलन से प्रेम में नवीनता आती हैं। कन्हीं की दया में मेरे प्राण भी जुडे हुए है। अर्थात् भगवान के आशीर्वाद से हम जीवित है।

विशेष :

1द्ध राध और कृष्ण के प्रति भक्ति भावना का चित्राण।

2द्ध सरल, सहज, ब्रज भाषा का प्रयोग।

3द्ध माधुर्य भक्ति भावना।

4द्ध पगे–प्रान में अनुप्रास अलंकार की छटा दिखाई देती है।

6. सेष, गनेस, महेस, दिनेस, सुरेसहु जाहि निरंतर गावैं।

जाहि अनादि अनंत अखंड अछेद अभेद सु बेद बतावैं।

नारद से सुक ब्यास, रहैं पचि हारे तऊ पुनि पार न पावैं।

ताहि अहीर की छोहरियां छछिया भरि छाछ पै नाच नचावै।।

प्रसंग : पूर्ववत्।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद में रसखान ने भगवान श्री कृष्ण के विविध् गुणों का वर्णन करते है और कहते है कि वह सभी देवों के पुज्य है।

व्याख्या : कवि रसखान कहते है कि जिस भी कृष्णर के गुणों का शेषनाग, गणेश, शिवाजी, सूर्यदेव और इन्द्रदेव भी गुणगान करते है, वेद जिसके स्वरूप का निश्चित ज्ञान प्राप्त कर उसे अनादि, अनंत, अंखड तथा अभेध बताते हैं। नारद शुकदेव और व्यास जैसे ट्टषिमुनि जिसके बारे में जानने की कोशिश करते हैं परन्तु हार मानकर बैठकर जाते हैं, उन्हीं श्री कृष्ण को अहीर की लडकीयां एक कटोरी छाछ पर नाच नचाती है और वे भी नाच जाते है।

विशेष :

1द्ध भगवान श्री कृष्ण का गुणगान किया है।

2द्ध भाषा सरल–सहज भावानुकूल ब्रज भाषा का प्रयोग किया है।

3द्ध माध्ुर्य गुण का प्रयोग।

4द्ध अनुप्रास अलंकार का प्रयोग हुआ है।

7. **सेष सुरेश–दिनेश गनेस अजेस ध्नेस महेस मनावौ।**

कोऊ भवानी भजौ मन की सब आस सवै विध्ि जोई पुरावौ।

कोऊ रमा भजि लेहू महाध्न कोऊ कहूं मन वांछित पावौ।

पै रसखानि वही मेरो साध्न और त्रिलोक रहौ कि नवासौ।।

प्रसंग : पूर्ववत्।

सन्दर्भ : प्रस्तुत पद में रसखान अपने आराध्य भगवान श्री कृष्ण को संसार में सर्वश्रेष्ठ मानते है और उनके अतिरिक्त संसार की अन्य वस्तुएं नगण्य हैं।

व्याख्या : रसखान कहते है कि जब भगवान कृष्णर रक्षक हैं तो मनुष्य को उसी प्रकार की चिंता नहीं होती। वे इतने दयालु है कि वह अपने भक्तों की आवाज सुनते ही उनकी रक्षा के लिए तत्पर हो जाते हैं। द्रोपदी, गणिका, गज, गी(और अजामिल ने अपने जीवन में क्या कार्य किए थे, ये उन्होंने नहीं देखा और उनका उ(ार कर दिया। गौतम ट्टषि की पत्नी अहिल्या को कितनी सहजता से तार दिया तथा हिरण्यकश्यप को मारकर अपने भक्त प्रह्लाद के भारी दुख को पलक झपकते ही हरण कर लिया। इसलिए है मनुष्य तू क्या सोच रहा है? जब श्री कृष्ण तुम्हारे रक्षक है तब तुम्हे कोई चिंता नहीं करनी चाहिए क्योंकि उस समय जमराज तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड सकता। भगवान श्री कृष्ण परम दयालु है और दुखहर्ता है भक्तों का ध्यान रखते है उनकी रक्षा के लिए तत्पर रहते हैं।

विशेष

1द्ध भगवान श्री कृष्ण की दयालुता का वर्णन है।

2द्ध अनुप्रास अलंकार का प्रयोग।

3द्ध सरल, सहज ब्रज भाषा का प्रयोग।

4द्ध माध्ुर्य भाव का प्रयोग।

2.10 कठिन शब्दावली

मानुष – मनुष्य। हौं – मैं। बसौं – निवास करूं। चकौं – चरूँ। मझारन – मध्य में। पाहन –पत्थर। पुरन्दर –इन्द्र। कालिंदी–कूल – यमुना नदी के किनारे। डारन –डालियां, शाखाएं। लैन –वाणी। औ –और। आन के संग – श्री कृष्ण के साथ। चुगुल – चुगल खोर। लबार

–झुठा और दुष्टा। विमल – शु(। चित – मन। सरस – रस से भरे हुए। लवलीन – तन्मय। नव – नूतन। पगे– मिले हुए। सेस – शेषनाग, महेस – शिवजी। सुरेसहु –देवेन्द्र। पचि – कोशिश करके। तऊ – फिर भी।

2.11 स्वयं आकलन प्रश्न

1द्ध रसखान का जन्म तथा स्थान का नाम लिखों।

2द्ध रसखान की रचनाओं के नाम लिखें।

3द्ध रसखान का मूल नाम क्या था?

4द्ध रसखान की मृत्यु कब हुई ?

5द्ध रसखान के आराध्य देव कौन थे?

2.12 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1द्ध उतर – 1548 ईú आगरा और दिल्ली के मध्य गांव में।

2द्ध उतर – सुजान रसखान, प्रेमवाटिका।

3द्ध सैयद इब्राहिम।

4द्ध उतर – 1628 ईú।

5द्ध उतर – भगवान श्री कृष्ण।

––––

खण्ड – तीन

घनानंद और उनका काव्य

3.1 भूमिका

3.2 उद्देश्य

3.3 घनानंद की व्यक्तित्व एवं कृतित्व

3.4 घनानंद का साहित्यिक परिचय

3.5 स्वच्छन्दतावादी काव्य और घनानंद

3.6 घनानंद की प्रेम अभिव्यंजना

- 3.6.1 प्रेम जीवन का साघन
- 3.6.2 प्रेम की विविध्ता का निरूपण
- 3.6.3 आसक्ति
- 3.6.4 विषमता
- 3.6.5 प्रेम की रीति
- 3.6.6 अभिलाषा
- 3.6.7 भाव सुक्ष्मता
- 3.6.8 भावानुभूति से सम्पृक्त प्रेम
- 3.6.9 वियोग की प्रध्नता
- 3.6.10 सयोग में वियोग की अनुभूति

3.7 घनानंद का काव्य सौन्दर्य

- 3.7.1 भावाव्यक्ति
- 3.7.2 भाषा
- 3.7.3 शब्दावली
- 3.7.4 शब्द शक्ति
- 3.7.5 रस
- 3.7.6 अलंकार
- 3.7.7 शब्द न्यास

3.8 सारांश

3.9 व्याख्या भाग

3.10 कठिन शब्दावली

3.11 स्वयं आकलन प्रश्न

3.12 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

3.13 सात्रिाक प्रश्न

3.1 भूमिका

हिंदी साहित्य का 'रीतिकाल' श्रृंगार विषय की प्रधानता के कारण 'श्रृंगारकाल' के नाम से भी जाना गया, लेकिन जहां रीतिब(कवियों ने श्रृंगार की कविता का सृजन किया वही रीतिमुक्त अर्थात स्वच्छंदतावादी कवियों ने प्रेम का आधार बनाकर अपनी निजी पीड़ा को अभिव्यक्ति दी। इन्हीं कवियों में 'प्रेम के पीर' घनानंद का नाम लिया जाता है।

3.2 उद्देश्य

1द्ध रीकिाल के सम्बध में जानकारी।

2द्ध रीतिमुक्त काव्य धरा और घनानंद के संबंध में ज्ञान।

3द्ध घनानंद का साहित्यिक परिचय का ज्ञान।

4द्ध घनानंद की साहित्यिक विशेषताओं का बोध।

5द्ध रीतिकाल में घनानंद के स्थान की जानकारी।

3.3 घनानंद का व्यक्तित्व एवं कृतित्व

घनानंद के जन्म एवं मृत्यु संवत् को लेकर ही नहीं उनके वास्तविक नाम के विषय में भी विवाद है। वस्तुतः हिन्दी साहित्य में इस नाम के अनेक कवि मिलते हैं। एक नाम के अनेक कवियों के होने के कारण स्वच्छंद काव्यधारा के कवि घनानंद की प्रामाणिकता का प्रश्न सर्वप्रथम हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। इसका मुख्य कारण यह है कि कवि ने अपनी कविता में विविध नामों का उल्लेख किया है। हिंदी साहित्य में घनानंद, आनंदध्न और आनंद नाम के व्यक्तियों में वास्तविक स्वच्छंद कवि कौन है, यह एक विचारणीय प्रश्न है।

धनानंद के नामकरण के संबंध में दूसरा मुख्य विवाद 'आनंदध्न' नाम को लेकर है, क्योंकि आनंदध्न नाम के तीन व्यक्ति मिलते हैं–

– जैनधर्मी आनंदध्न

– वृंदावनवासी आनंदधन

– नंदगाव के आनंदध्न

आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा दिया गया तर्क ज्यादा संगत प्रतीत होता है। उनके अनुसार घनानंद वृदावन के आनंदध्न है। जिनका समय संवत् 1746 से 1796 तक माना है। शुक्ल जी के अनुसार ये नादिरशाह के आक्रमण के समय मारे गये ऐसा प्रतीत होता हैं कि कवि का मूल नाम घनआनंद ही रहा होगा छन्दातमक लयात्मकता के कारण यह स्वयं घनआनंद से घनानंद हो गये होंगे।

जीवनवृत के अनुसार घनआनंद मुहम्मदशाह रंगीले के यहां वीरमुंशी थे। ये मूलतः दिल्ली के कावस्थ थे और दिल्ली छोड़कर वृंदावन चले गये थे। और अंत तक वहीं रहे।

घनआनंद के काव्य में 'सुजान' का वर्णन मिलता है। जो मुहम्मदशाह 'रंगीले' के दरबार में नृत्य गायन–विद्या में प्रवीण वेश्या भी। इसी सुजान से घनआनंद को प्रेम हो गया था। दरबार के अन्य

दरबारी घनआनंद से ईर्ष्या करते थे। दरबारियों ने इसी ईर्ष्यावश एक चाल चली। उन्होंने रंगीले से कहा कि घनानंद बहुत मीठा गाते हैं उनकी बात में आकर रंगीले ने घनानंद को गाने का आदेश दिया लेकिन स्वाभिमानी घनानंद ने गाने से माना कर दिया। दरबारियों ने रंगीलें को भड़का दिया। कि ये आपके कहने पर नहीं सुजान कहने पर गायेगा। यह सुनकर दरबार में सुजान को बुलाया गया और तब घनआनंद ने गाना गाया, जिसे सुनकर बादशाह और दरबारी मंत्रा मुग्ध हो गये। गाना समाप्त होने पर बादशाह के आग्रह को ठुकराने की धृष्टता के परिणामस्वरूप उन्हें दरबार एवं राज्य छोड़ने का आदेश मिला। आदेश स्वीकारते हुए जब घनाआनंद जाने लगे तब ये सुजान से भी चलने को कहने लगे लेकिन धन की लोभी सुजान ने उनकी प्रेम भरे अनुरोध को ठुकरा दिया। अतः जान और जहान दोनों लुटा कर धनांआनंद वृंदावन की ओर अभिमुख हुए। जीवन से उन्हें पूर्ण विरक्ति हो गई थी। वृंदावन में उन्होंने राधा–कृष्ण की उपासान आरंभ की लेकिन वे सुजान को नहीं भूले। अतः उनके पदों में सर्वत्रा सुजान ही आलम्बन है। इसी कारण इनके काव्य पर आरोप लगाया जाता है कि इनका काव्य इनकी निजी पीड़ा का कोश है या इनकी ईश्वरीय भक्ति का रूप है।

घनानंद की मृत्यु अहमदशाह अब्दाली के दूसरे आक्रमण में संवत 1817 में हुई।

3.4 घनानंद का साहित्यिक परिचय

घनआनंद की रचनाओं का पूर्ण और प्रमाणित ब्यौरा नहीं मिल पाता है। मिश्रबंधुओं के द्वारा दी गई घनानंद की कृतियों की सूची के आधार पर परवर्ती विद्वानों ने घनआनंद की रचनाओं का विस्तृत उल्लेख किया है। मिश्रबंधुओं द्वारा प्राप्त सूचना, सभा की खोज, रिपोर्टों तथा प्राप्त पाण्डुलिपियों के आधार पर आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने घनआनंद की कृतियों की प्रामाणिकता को ध्यान में रखते हुए उन्हें 'घनआनंद–ग्रंथावली' के नाम से प्रकाशित किया है। उनकी सूची इस प्रकार है – 1द्ध सुजान हित, 2द्ध कृपाकंव, 3द्ध वियोग बेलि, 4द्ध इश्कलता, 5द्ध यमुनायश, 6द्ध प्रीतिपावस, 7द्ध प्रेम पत्रिाका, 8द्ध प्रेम सरोवर, 9द्ध ब्रज विलास, 10द्ध सरल बसन्त, 11द्ध अनुभव चन्द्रिका, 12द्ध रंग बधाई, 13द्ध प्रेम प(ति, 14द्ध वृषभानुपुर सुपमा वर्णन, 15द्ध गोकुल गीत, 16द्ध नाम माधुरी, 17द्ध गिरिपूजन, 18द्ध विचार सभा, 19द्ध दान घटा, 20द्ध भावना प्रकाश, 21द्ध कृष्ण कौमुदी, 22द्ध धाम चमत्कार, 23द्ध प्रिया प्रसाद, 24द्ध वृंदावन गुडा, 25द्ध ब्रज प्रसाद, 26द्ध गोकुल चरित्रा, 27द्ध प्रेम–पहली, 28द्ध रसना यश, 29द्ध गोकुल विनोद, 30द्ध मुरलिकामोद, 31द्ध मनोरथ मंजरी, 32द्ध बृज व्यवहार, 33द्ध गिरिगाथा, 34द्ध पदावली, 35द्ध छंदाष्टक, 36द्ध राज स्वरूप, 37द्ध त्रिाभंगी, 38द्ध परमहंस, वंशावली, 39द्ध प्रकीर्णक।

3.5 स्वच्छदत्तावादी काव्य और घनानंद

प्रत्येक भाषा के साहित्य में निरंतर सृजन होते रहने के कारण रूढ़ियां और परम्पराएं बनती है और समय आता है जब वे टूटती है उन्हें तोड़ने वाले कवि स्वच्छंद और उनकी कविता स्वच्छंदतावादी होती है।

रीतिकाल में पहले प्रकार का काव्य रीतिब(कहा, जा सकता है। दूसरे प्रकार का रीतिमुक्त या रीति स्वच्छंद रीतिमुक्त कविता नायक नायिका भेद, भाषा चमत्कार, अंलकार और कृत्रिाम जीवन स्थितियों के वर्णन से अलग तथा परम्परागत रीति प(ति से अलग हटकर लिखी गयी सहज निश्छल काव्यधारा थी। रीतियुक्त कवि रीति के पाशा से निर्मुक्त थे और स्वच्छंद भावों के गायक थे। इनमें व्याप्त प्रेम की तरह ने ही काव्य सृष्टि की प्रेरणा दी।

रीतिमुक्त काव्यधारा जिसे स्वच्छंद काव्यधारा कहना अधिक समीचीन होगा। यह उस की परम्परित काव्य रचना के प्रति एक विद्रोह था काव्यशास्त्रा के निश्चित नियमों के भीतर बंधकर पिटी पिटायी उपनाओं, अलंकार योजनाओं तथा भावभंगिमाओं की अभिव्यक्ति करना इस धारा के कवियों को पंसद नहीं था। वे स्वच्छंद भाव से वैयक्तिक अनुभूतियों को मुखरित करना चाहते थे, जिसपर न तो ये

शास्त्रा का बन्धन स्वीकार करना चाहते थे और नहीं आश्रयदाताओं की रुचियों का ही दबाव मानने का तैयार थे। ये काव्य को साध्य रूप में न स्वीकार कर प्रेम को साध्य के रूप में स्वीकार करते थे, जिसकी अभिव्यक्ति के लिए काव्य साधन मात्रा था। मनोवेग तथा प्रेम की स्वच्छंदता को महत्व प्रदान करने के कारण श्रमपूर्वक ये ''कविता का निर्माण'' नहीं करते थे बल्कि अपने कविश्व से ये स्वयं निर्मित थे अर्थात रीतिब(कवियों की भांति इनका व्यक्तित्व इनकी कविताओं से अलग अलग नहीं रहता था। घनानंद कहते हैं।

लोग लागि है कवित बनावस

बोहि को मेरे कवित बनावत

रीतिब(काव्य के कवियों ने अपने काव्य में परम्परागत तत्वों, सि(ांतों को अपनाया है। रस, अंलकार, रीति, ध्वनि वक्रोक्ति और पिंगल की सीमा रेखा में बंधकर कविता लिखते थे। इसके विपरीत रीतिमुक्त कवियों ने बुि(के तर्क की अपेक्षा भाव को महत्व यही कारण है कि एक ओर रीतिवाद केशव ने कविता के लिए अंलकारों को महता दी है– ''भूषण बिनु न विराजी कविता वनिता मिन' तो दूसरी ओर घनानंद ने कहा ''लोग लागि है कवित बनायत मोहि का मेरे कवित बनाव'' ठाकुर कवि ने ऐसे कवियों पर तो करारा व्यंग्य कसा है।

सीख लीन्हों जीन मृग त्वंजन कवल नैन,

सीख लीन्हों यश और प्रताप को कहानी है।

डेल को बनाय आय मेलत सभा के बीच,

लोमन कवित कीतो खेल करि जानो है।

रीतिब(कवियों ने अपने काव्य को ही नहीं अपनी प्रेम भावना को भी शास्त्राी परिपाटी से जोड़ रखा है। यही कारण है कि इन्होंने प्रेम मार्ग में सखी सखा और इसी के माध्यम से प्रेम निवेदन प्रस्तुत किया है। इनके प्रेम में बनावटीपन, दुराव छिपाय है तभी भिखारीदास ने कहा है–

आगे के कवि रोझिहैं तो कविताई,

न तो राधा कन्हाई सुनिरन को बहानो है।

इसके विपरीत रीतिमुक्त कवियों ने किसी माध्यम की आवश्यकता ही नहीं समझी। इनका प्रेम सीधा, सरल वैयक्तिक है। इन कवियों मे बाहय सौन्दर्य के अलावा आन्तरिक सौन्दर्य और मानसिक सौन्दर्य का चित्राण भी किया में सभी वे कहते हैं–

अति सूधे स्नेह को बारग है,

जहां नंकु समानप बांक नहीं।

सहं साचे चले सजि आपनुपो,

शिक्षके कपटी में निसांक नहीं।।

'रीतिमुक्त कवियों में किसी भी राजा का आश्रय कभी स्वीकार नहीं किया। मस्त मौला, फक्कड़ और प्रेम के दीवाने बोधा ने तो यहां तक कह दिया–

'कोम मगरूर सासों इतनी मगरूरी कीजै,

सधुता हुवै चलै वासों मधुता निमाइये।

दाता कहां सूर कहां सुंदर प्रवीण कहां,

आप को चाहे साके बाप को न चाहिए।

शिल्प के धरातल पर भी रीतिब(कवि जहां अलंकार व चमत्कार प्रदर्शन को अधिक महत्व देते हैं वहीं रीतिमुक्त कवि इस चमत्कार प्रदर्शन के प्रति उदासीनता बरती है।

कुछ आलोचकों ने इनकी ;काव्य व कवियोंद्ध विशेषताओं से परिचित कराया है।

हजारी प्रसाद द्विवेदी– सहज प्रवाहमय प्रेमधारा का विकसित रूप स्वच्छंदसावादी काव्य है।

विश्वनाथ प्रसाद मिश्र– स्व्च्छंदतावादी काव्य भाव भांवित है बु(बोधित नहीं इसलिए आंतरिक्ता इसका सर्वोपरि गुण हैं।

डा. नगेन्द्र – कवित्य इनका साध्य नहीं अंतः करण की भावरशि की उन्मुक्त भाव से भावाभिव्यक्ति इमका लक्ष्य है इसमें इन्हें तृप्ति और संतोष है।

मनोहर लाल गौड – उमंग के आदेश पर थिरकने वाले कवि थे, ये हृदय की दौड़ के लिए राजमार्ग चाहते थे, रीति की संकरी गली नहीं। इसलिए इनका काव्य स्वतः उद्भावित है।

रामचन्द्र शुक्ल – ये कवि प्रेमोन्नत हैं। ये काव्यशास्त्रीय लक्षणों के अनुसार काव्य रचना नहीं करते इसलिए इनके मंत में मार्मिकता व मनोहरता है।

डा. उपाध्याय – स्वच्छंदतावादी कवि प्रेम में गत होकर अपने आंतरिक अनुराग से ही काव्य रचना करते थे इसलिए इनके प्रेममय उल्लास से भरा हुआ काव्य सहस्य को मुक्त कर देता है।

इन कवियों के काव्य संबंधी दृष्टिकोण को भिन्न रूपों में देखा जा सकता है।

1. ये रीति के संकीर्ण मार्ग पर नहीं चलना चाहते थे।
2 इनके काव्य में मार्मिकता, शृंगारिकता अधिक है क्योकि ये कवि अपनी उमंग पर थिरकने वाले प्रेन के पपीहे थे।
3. इनकी काव्य पयस्विनी ने काव्य रूढ़ियों के बंधनों को तोड़ा।
4. अनुभूति की अभिव्यक्ति इनके काव्य का धर्म है। अन्य शब्दों में इनके यहां अनुभूति का दूसरा भाग ही काव्य है।
5. ये प्रेम के चालक थे इसलिए ये मिलने एवं भोग में विश्वास नहीं करते थे विरह एवं पीड़ा को अपने काव्य का उद्देश्य मानते थे।
6. इनका काव्य भाव बोधित है बु(बोधित नहीं।
7. मे आश्रयदाता के संकेत पर नृत्य करने वाले नहीं प्रेम पर पर मिटने वाले थे।
8. इन्होंने परंपरागत उपनामों, काव्य शास्त्रीय नियमों और पिटी पिटाई कवि संगय ख्याति प(ति का विरोध किया।
9. अनुभूति को इन्होंने सर्वोपरि प्राथमिकता दी घनानंद ने स्पष्ट लिखा है कि इनके काव्य में हृदय रानी की तरह उच्च पद पर आसीन है और बु(हृदय की दासी है –

रीतियुक्त सुजान सची पटरानी,

बची बु(बापुरी करि दाखी ।।

10. इनके अनुसार भाववेग ही सब कुछ है। इस आवेग के सामने काव्य रीति, कुल मर्यादा और लोकलाज के समस्त बंधन शिथिल होकर टूट जाते हैं। बोधा ने तभी कहा है जो इस बंधन के चक्कर में नहीं फंसना चाहते। वे इस कठिन मार्ग पर कदम न रखें।

यह पेम को पंथ कराल, महा तरवार की धार पे धावनो है।

यहा सच्चे जवां मर्द ही चल सकते हैं। घनानंद, ठाकुर, बोधा, आलम, आदि ऐसे ही कवि हैं जिन्होंने कुल और धर्म को तिलांजलि दी है।

11. इन कवियों के काव्य को समझने को वही पीड़ा, दर्द, अन्तःचक्षु चाहिए जो इन कवियों के पास थे तभी ब्रजनाथ ने कहा है–

जग की कठिनाई को धोक रहैं,

ह्‌यां प्रवीनन की गति जाति जकी।

समुझे कविता घना आनंद की,

हिय आंखिन प्रेम की पीर तकी।

12. रीतिमुक्त कवि हृदय की मुक्तावस्था प्राप्त, रस दशा को पहुंचे हुए कवि थे। इन्होंने अपनी अन्तशः चेतना की अभिव्यक्ति के लिए जिस भाषा का प्रयोग किया है वह सहज वक्रता और अकृत्रिमता लिए हुए है।

13. ये वासना में पंकिल राजाओं के मानस का रंजन करने वाले चाटुकार नहीं में, ये अपनी उमंग पर थिरकने वाले बुि(के टेढ़े मेढ़े मार्ग पर न घलकर सीधे सीधे मार्ग पर चलने वाले भावुक कवि थे।

14. दरबार की घुटन से ऊबकर और स्वाभिमान को बनाए रखने के लिए इन्होंने दरबार को ठोकर मार दी, यही इनकी स्वच्छंदता का परिचय है।

संक्षेप में रीतिब(कवियों से रीतियुक्त/स्वच्छंदतावादी कवियों का अंतर समझा जा सकता है।

रीतिब(कवि और कविता

- शास्त्रीय नियमों में आव(थे।
- दरबार व राजा से आब(थे।
- अंलकार का बरबस, अनिवार्य प्रयोग किया।
- कृत्रिम प्रणय भावना अपनायी।
- चमत्कार की प्रधानता है।
- बुि(, तर्क की प्रधानता है।
- छल–कपट, धोखा है।
- प्रेम में बनावटीपन है।
- चाटुकारिता की भावना है।

रीतिमुक्त कवि और कविता

- शास्त्रीय नियमों से पूर्णतः स्वच्छंद है।
- दरबार व राजा से पूर्णतः मुक्त है।
- अलंकारों का सहज, स्वाभाविक प्रयोग किया।
- भोगी हुए, महसूसी प्रणय भावना है।
- सहजता, मनोवैज्ञानिकता की प्रधानता है?
- हृदय, भावना की प्रधानता है।
- आशा विश्वास है।
- प्रेम का सीधा मार्ग अपनाया है।
- मन की भांज है।

3.6 घनानंद की प्रेम व्यंजना–

रीतिमुक्त कवियों का मूल वक्तव्य है प्रेम। घनानंद की प्रेम विषयक विशेषताएं निम्न प्रकार वर्णित की गई है –

प्रेम की मार्मिक व्यंजना– इन्होंने कांव्य को प्रेम की मूलवर्ती संवदेना से स्पंदित किया है। चाहे वह मुक्तकों के रूप में लिखा गया हो चाहे आख्यान के रूप में। इस प्रेम वर्णन का वैशिष्टय इस बात में है कि वह स्वानुभूति प्रेरित है। इनकी प्रेमाभिव्यंजना इनकी निजी प्रेम भावना की अभिव्यक्ति है। प्रेम की गूढ़ अन्तर्दशाओं का चित्राण जैसा इन कवियों से प्राप्त होता है वैसा रीतिब(सभा अन्य श्रृंगारी कवियों दें नहीं। रीतिब(कवियों के समान इनका प्रेम बैठे ठाले का प्रेम नहीं है। वह केवल बहार उछल कूद में नहीं चूकता अन्तर को भिगोता है, उसने किसी बिचौलिये की अपेक्षा भी नहीं है अर्थात प्रेमी प्रेमिका के बीच कोई दूती या सखी नहीं आती। इनका प्रेम सरल व निष्कपट है।

अति सूधे स्नेह को सारग है,
जहां नैकु सयानप बांक नहीं।
तहं सांचे चले तजि आपनुपो,
झिझके कपटी जे निसांक नहीं ।।
घनानंद प्यारे सुजार सुनो,
इस एक ते दूसरा आंक नहीं।
तुम कौन घौं पाटी पढे हो लला,
मन लेहु में देहु छटांक नहीं ।।

3.6.1 प्रेम जीवन साधना –

इन कवियों ने प्रेम को जीवन की साधना माना है। तभी इसमें प्रवष्टि होने के लिए बुि(को छोड़ना पड़ता है। सिर्फ निश्च्छल भावना ही प्रधान होनी चाहिए इसलिए इन्होंने बुि(को है कहा है–

इनका प्रेम विलास को एक अंगमात्रा है यह सबके बस की बात नहीं है इसका मार्ग बहुत कठिन है।

यह प्रेम को पंथ कराल,

नहा तलवार की धार पे धावनो है।

किंतु प्रेम की अडिग आभा और सहनशीलता के. सरल भी जाता है–

जति सूते स्नेह का भारत है, जहां नंकु बांक नहीं।

रीतिब(प्रेम वासनाजन्य है जो अनेक के प्रेम करने का ढोंग करता है। पर रीतियुक्त एक के प्रति एकनिष्ठ है।

3.6.2 प्रेस की विषमता का निरुपण

इनके काव्य में निजी अनुभूतियों का सहज प्रकाशन है। इनके प्रेम में विषमता है। यह इसलिए है कि प्रेमी प्रिय को जितना चाहता है, उसके लिए जितना तड़पता है प्रिय प्रेमी से उतना नहीं इसका उद्देश्य प्रिय को क्रूर और दुष्कर्मी दिखाना नहीं। अपितु निठुर, उपेक्षापूर्ण पीड़ा से अनभिज्ञ, सहानुभूति शून्य कहा और दिखाया है–

क्यों हंति हेरि हरबां वौ हिजरा

अरू क्यों हित कै चित चाह बढाई।

प्रिय की अपेक्षा पर प्रेमी कवि ने प्रिय को उलाहना दिया है। प्रेमियों ने प्रिय को दुष्ट और दुराधरी कह कर अपने प्रेम को उपहास्यास्पद नहीं बनने दिया है। प्रिय के इस आचरण में अपना दोष देखता है भाग्य को काव्य ठहराता है–

चाहो अनचाहो जान प्यारे पै आनन्धन

पीति रीति विषक सु रोब–रोब रही है।

प्रिय व प्रेमी की विषमता को निम्न पक्षों से देख सकते हैं।

प्रिय पक्ष	– प्रेमी पक्ष
छल और धोखा	– सम्पूर्ण समर्पण
विस्मरण	– स्तरण
इठलाइट	– तड़प
सकाम	– निष्काम
सर्चित	– निश्चित
सविषाद	– सहर्ष
चैन चंद्रिका का अमृतपान	– विषाद आतप से तप्त

भावानुभूति से सम्पूकता प्रेम–इनका प्रेम भावानुभूति से सम्पृकत है सभी तो प्रिय का प्रथम दर्शन ही प्रेम की इण्डियों पर रीझकर।

3.6.3 आसक्ति

आसक्ति का अर्थ है – मन प्रवृत्ति का एक स्थल पर बंध जाना। घनआनंद का सुजान नहीं वरन् सुजान के प्रेम के प्रति आसक्ति भाव है। चाहे सुजान ने उसकी उपेक्षा की है। इस आसक्ति में मन की व्याकुलता स्थल–स्थल पर व्यक्त होती है। उदाहरणार्थ–

भौर से सांझ लो कानन और निहारित बावरी मैकु न हारति।।

गोहन सोहन जोह की लागिये रहे आखिन के उद आरति ।।

स्वच्छंद प्रेम– इनका प्रेम बाह्य आडम्बर से परे सहज है। कवि ने प्रेमाभिव्यक्ति अपनी मन की मौजानुसार की है। उन्हें प्रेम की व्यथा पीड़ा भी मधुर लगती है। इसीलिए वे संयोग व वियोग दोनों स्थिति में स्वयं को बेचैन ही समझते हैं–

चाह के रंग में भीज्यो हियोॠ

बिछुरे मिले प्रीतम सांति न मानै।

3.6.4 विषमता–

घनानंद के प्रेम वर्णन की सबसे बड़ी विशेषता है सैषम्य। रीतिकालीन कवियों ने प्रिय की उपेक्षा, तिरस्कार का बढ़ा चढ़ाकर वर्णन किया है। किंतु प्रेम की विषमता का जितना साफ–सुधरा वर्णन जिस गंभीरता से घनानंद ने किया है किसी अन्य ने नहीं किया। उदाहरणार्थ–

चाहौ अनचाही जान प्यारे पै आनंदघन,

प्रीति रीति विषम सु रोम रोम रमी है।

प्रेम की दृढ़ता – घनानंद को चाहे सुजान से उपेक्षा तिरस्कार पिता किंतु उनके प्रेम में कहीं अस्थिरता नहीं दिखाई देती है। उनके प्रेम में प्रेम के प्रति अगाध आशा, आस्था, विश्वास, दृढ़ता है–

मोही तुम एक तुम मो सम अनेक,

काह कछु चंदहि चकोरन की कमी है।

उनकी दृढ़ता पाषाण हृदया नायिका को भी पिघलाने की क्षमता रखती है–

ऐसे घनानंद गति है टेक मन मांहि।

ऐरे निर्दयी तेरे दया उपजाय हौ।

3.6.5 प्रेम की रीति –

घनानंद ने मुक्त भोगी के रूप में प्रेम की रीति को समझा इसलिए वे प्रेमी प्रेमिका के आदर्श मछली और जल के उपमानों को भी हेय बताया है। उदाहरणार्थ –

हीन भये जलवीने अधीन,

कहा कछु वो अकुलाने सामने।

नीर सनेही को लाव कंलक,

निरास है कायर स्यायत प्रानै।

अर्थात मछली जल से अलग होकर मर जाती है जो कायरपन है इस क्रिया से तो प्रेमी को फलक लगता है अपितु प्रेम के अभाव में चाहे तड़प के साथ जीना हो वहीं प्रेम की रीति है।

3.6.6 अभिलाषा –

घनानंद ने प्रियतम का दर्शन सर्वप्रथम आंखों में किया था। अतः यही सदेव वर्शन की अभिलाषी रहती हैं, उसके सौंदर्य की अभिलाषी रहती हैं, उसके सौन्दर्य का पाना करना चाहती हैं।

सवरें रूप की नीति अनुप,

न्यो न्यों लागत ज्यां ज्यों निहारिये ।

तयों इन आखिन बानी अनोखी

अधानी कहूं नहीं आनि तिहारियै।

इसी गुण के कारण बिहारी की कविता यदि 'वाह' है तो घनानंद की 'आह'।

36.7. भावसूक्ष्मता

प्रेम को स्वच्छंद कवियों ने सामान्यतः भाव व्यापार स्वीकारा है। उन्होंने सलि पक्ष का निषेध किया है। घनानंद ने शरीरिक अनुभूति का वर्णन बहुत कम है अधिकतर भावधारा का ही चित्राण है। ये कवि श्रृंगार की अश्लील चेष्टाओं से बच गए हैं। भाव सूक्ष्मता एक का रूप देखिए –

लाजनि लपटेनि चितवनि भेद भाव भरी,

लखित ललित लोल चख तिरछनि में।

प्रथम दर्शन का प्रेम– मनोविज्ञान के अनुसार वास्तविक प्रेम प्रथम दर्शन होता है। परिचय के आधार पर बढ़ा हुआ प्रेम प्रेम की दूरी की स्थिति में विलुप्त हो जाए संभव है किंतु प्रथम दर्शन के प्रेम से एक खिचाव बना रहता है। घनानंद का प्रेम ऐसा ही है। तभी वे सुजान के अभाव में भी अनुरक्स हैं।

जब से निहारे घनआनंद सुजान प्यारे,

तब से अनोखी आगि आगि रही चाह की।

3.6.8 भावनाभूति से सम्पृक्त प्रेम

इनका प्रेमा भावनाभूति से सम्पृक्त है तभी तो प्रिय का प्रथम दर्शन ही प्रेम की इंडियों पर जादू सा कर देता है। वे चेतनाहीन हो जाती है और आधेपात एक विफलता सी छाई रहती हैं। इनमें काम की ग्रन्थि नहीं है। इनके प्रेम की पदवी ज्ञान साधना से भी उंची है। ये प्रेम की भावना में संसार से विलग हो जाते हैं। घनानंद की आंखें तो पलक झपकमा ही भूल जाती हैं। ये प्रेम को सम्पर्ण मानते हैं–

हित के हंकारौ तो हुलासनि सहित धावै,

जो कघु कहौ तो अनिख बिहारे है।

भावनाभूति की पराकाष्ठा के कारण ही वे कहते हैं–

मोहि तुम एक तुम कौं सम अनेक,

कहा कछु चंदि चकोरन की कमी है।

3.6.9 वियोग की प्रधानता –

गिरह इनके काव्य की अमूल्य निधि है। प्रेम की विषमता फारसी साहित्य की विशेषता है।

''मन लेहु पै देहु छआंक नहीं'' भारतीय परम्परा में प्रेम का मन फगुवा देकर गारी के लिए नहीं तरसता यहां सन प्रेम के दर्शन होते है। इनके काव्य का प्रेरणा केन्द्र इनकी व प्रेमिका है जिन्हें वे प्राप्त न कर सके। इनकी अप्राप्ति की दशा में उनको आत्मपीड़ा ने आत्मनिवेदन की पीड़ा दी। यही पीड़ा अपने को गलाने का दर्द, चिंता, व्याधि, मरण, अभिलाषा आदि का ऐसा रूप सुफी कवियों की ही देन है। ये प्रेम की रीति में मरना सबसे जघन्य, हीन कर्म समझते हैं।

ही भए जलबीन अधीन कह कछु वो अकुलाने समाने।

मीर सनेही को लाभ कलंक निरास हवे कायर स्वायत प्राने।

इन्हें अपने प्रेम पर पूर्ण विश्वास है–

ऐसे घनानंद वही हे टेक मन बाही,

ऐरे निरदई तोडी दया उपाया हों।

इन कवियों ने सर्वाधिक वेदना घनानंद में सिमटी हुई है। डॉ. रामधारी दिनकर के शब्दों में ''विरह तो घनानंद की पूंजी ठहरा।''

3.6.10 संयोग में वियोग की अनुभूति

इनका वियोग इतना सघन और व्यापक है कि इसके कवि संयोग में भी वियोगानुभूति करते रहते हैं। वियोग व्यथा विरह में सताती ही है संयोग भी सताने में पीछा नहीं छोड़ता है–

भोर ते सांझ लौ कानन ओर निहारती बावरी नेकु न हारित।

सांझ ते भोर लों तारन ताकियो तारनि सो इफतार न टारती है।

सयोग में इन्हें खटका लगा रहता है। कहीं वियोग न हो जाए–

नेहा सब कोउ करै कहा करै मे जात।

करियों और निषाहियो बड़ी कठिन यह बात।।

इनका वियोग रहते सहते इतना विरह अभ्यस्त हो चला था कि संयोग की सुखद स्थिति में भी चैन नहीं था।

बिछुरै मिलै प्रीतम शांति न मानै

इनका एकांगी, एकनिष्ठ, एक तरफा प्रेम में लोक की लज्जा का परित्याग, परलोक की चिंता के प्रति उपेक्षा भाव आदि तत्वों का जो प्रभाव है वह कृष्ण भक्ति से प्राप्त हुआ हैं।

इस प्रकार दरबारी संस्कृति शास्त्रीय बंधनों और रीतिप्रवृत्ति से पूर्णतः स्वच्छंद कवियों का यह रीतिमुक्त काव्य अपने में अनूठा है। जिसमें प्रेम की उच्चता, उदात्ता, गहनता, व्यापकता, वासनाहीनता, सूक्ष्मता, भावात्मकता, आदि का गुण विद्यमान है ;बोधा इसके अपवाद हैंद्ध। इन कवियों ने प्रेम की अनत्यता, लोकलाज का परित्याग, कष्ट सहिष्णु, अहंकार, स्वाभिमान, अभिमान, मगरूरी का त्याग आदि गुण हैं। जिससे इन्होंने प्रेम के ऊंचे आदर्श को प्राप्त किया है। इसलिए इनके काव्य को समझने के लिए ह्रदय की आंख की कल्पना मात्रा कल्पना नहीं अनिवार्यता है –

समुझै कविता घनआनंद की,

हिंय आंखिन नेह की पी तकी।

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने कहा है– प्रेममार्ग का ऐसा प्रवीण व धीर पथिक ब्रज भाषा का दूसरा कवि नहीं हुआ।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सुजान के प्रति घनानंद ने जो प्रणय निवेदन किया हैं वह हिंदी काव्य की स्थायी संपदा है। वैसा आत्मनिवेदन वैसी पीड़ा वैसी विरहानुभूति वैसी आत्मभिव्यंजना वाला, काव्य मध्ययुग में नहीं लिया गया। घनाआनंद में आलम, ठाकुर, बोधा, द्विजदेव, आदि सभी की विशेषताओं का मनोयोग से समावेश हो जाता है। अपनी विशेषताओं के कारण घनआनंद स्वच्छंद गायकों में पृथक और श्रेष्ठ हैं। समूचे हिंदी काव्य में ऐसी प्रेम छाया को चितेरा दूसरा नहीं है। आत्मपीड़ा का दूसरा नाम ही घनआनंद है।

3.7 घनानंद की काव्य रचना–

घनआनंद की काव्य रचना–साधारणजन की अपेक्षा कवि अनुभूतियों का धनी है। कल्पनाओं का स्रष्टा है रस भोक्ता है. परन्तु उनका सुंदर भाव जगत अनुराग रोदन के समान निष्प्राय एवं निष्प्रयोजन हैं। यदि उसका आकार साकार नहीं होता यदि उसे कानों से सुना नहीं जा सकता, नेत्राों से देखा नहीं जा सकता। इस गुण से विभूषित होने के लिए कवि अनुभूति, कल्पनाओ, भाषों एवं रसों को अभिव्यक्ति की अपेक्षा है। अभिव्यक्ति व वर्णन शैली है जिसमें कवि अपनी हृदय जनित की पूंजी अर्थात अनुभूति को अनेक उपकरणों के कलात्मक प्रयोग द्वारा वाणी प्रदान करता है, अनुभूति को शब्द रूप देता है। अतः कवि का कलात्मक पक्ष भी विषयवस्तु पक्ष या अनुभूति की भांति प्रभावी होना अनिवार्य होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो कथा का पाठक तक सही ढंग से सुगमतापूर्वक पहुंचाने का एकमात्रा साधन काव्य कला ही है। इसलिए काव्य में इसके महत्व को निर्विवाद रूप से स्वीकार किया गया है। रीतिकाल जिसमें घनानंद का कवि पल्लवित हुआ था। शिल्प प्रधान युग था। फलस्वरूप उसे 'कला काल' 'अलंकृत काल' आदि नामों से भी अभिहित किया गया। कविता बिना अलंकार के कविता नहीं कहलाती थी–

'भूषणं बिनु न बिराजई कविता बनिता मित'

घनानंद जैसे रतिमुक्त कवियों के लिए तो यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि कवि को उनकी जीवनगत आवश्यकता थी। अतः उन्होंने इसे खिलवाड़ रूप में नहीं लिया, एक जीवन संराश के रूप में ग्रहण किया है। उस साधना या स्रोत उनके जीवन की परिस्थितियां हैं। मार्मिक भाव विधान की भांति ही व्यंजना कौशल की दृष्टि से घनानंद की कुछ निजी विशेषताएं हैं–

3.7.1 भाविभिव्यक्ति–

ब्रजनाथ इनकी भावाभिव्यक्ति को समझने लिए कहते हैं–

जग की कविताई को धोक रहे,

हयां प्रवीनन की मति, जाती चकी।

समुझै कविता घनाआनंद की

हियं आंखिन नेह की पीर लगी ।

इनकी भावभिव्यक्ति में कल्पना के विधान पर अनुभूति की समतलता है। बिहारी आदि रीति कवियों की कविता जहां 'वाह' है वहीं घनानंद की कविता 'आह' है।

3.7.2 भाषा

भाषा को भावभिव्यक्ति का साधन माना जाता है। ब्रज भाषा जो रीतिकाल तक आकर पूर्णतः परिष्कृत व साहित्यिक हो गई थी। इस काल में ब्रज भाषा में जहां छंद अंलकार कवि वर्णन परिपाटी आदि पर इतने विस्तार से विचार किया गया पर एक भी जगह ठीक नहीं प्रयुक्त हुई भाषा प्रयोग में अराजकता दिखाई देती है। घनानंद ने इस अराजकता से अपने को बचाया है। इनकी 'सुजान हित' विशु(ब्रजभाषा में लिखी गई रचना है।

घनानंद के प्रशस्तिकार ब्रजनाथ ने इन्हें 'ब्रजभाषा प्रवीन' और 'भाषा प्रवीन' दोंनो बताया है। कहीं–कहीं भक्ति विषय रचनाओं में अरबी फारसी, पंजाबी व अवधी आदि भाषाओं का प्रचुर प्रयोग मिलता है। पर उनका प्रयोग स्वाभाविक ही है। ब्रजभाषा में उनकी आवश्यक घुसपैठ नहीं की है।

आधुनिक युग में बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकार 'साहित्यिक ब्रजभाषा का व्याकरण लिखने का निश्चय किया तो रीतिकाल के केवल दो ही कवि मिले, जिन्हें प्रामाणिक आधार बनाया जा सकता था। इनमें एक घनानंद और दूसरे बिहारी थे। अतः इन्हें 'ब्रजभाषा प्रवीन' कहना सर्वथा संगत ही है।

3.7.3 शब्दावली

घनानंद की रचना में शब्दों का सर्वाधिक तद्भव है। तत्सम का प्रयोग भक्तिकाल में ही नहीं रीतिकाल के आचार्यो ने भी किया किंतु तत्सम हिंदी की बोली विशेष ब्रजभाषा के अधिक उपयुक्त नहीं है। अतः उन्हें तद्भव में परिवर्तित किया गया। उदाहरणार्थ कुछ शब्दावली देखिए–

तद्भव – अथिर ;अस्थिरद्ध, निहकाम ;निष्कामद्ध, सुतंत्रा ;स्वतंत्राद्ध, वेदनि ;वेदनाद्ध, विथा ;व्यथाद्ध

देशज– रीझबी, देखबी, बेड़ी, पेछर, लथेर आदि।

विदेशी – दाम, निशानी, दिलजानी, हुस्यार आदि ।

3.7.4 शब्द शक्ति

भाषा की शक्ति सम्पन्नता पर विचार करते हुए भारतीय साहित्यशास्त्रा शब्द की तीन शक्तियां अभिधा, लक्षणा, व्यंजना मानी है। वाच्यार्थ का बोध कराने वाली अभिधा, लक्ष्यार्थ का बोध कराने वाली लक्ष्णा होती है। जहां इन दोनों से काम नहीं बनता तथ कवि व्यंजना शक्ति का सहारा लेते हैं।

घनानंद उस युग में अकेले कवि हैं जिन्होंने इन शक्तियों को पूरा उपयोग किया है। इनकी इस प्रवृत्ति का लक्ष्य हुए शुक्ल जी ने लिखा है– भाषा के लक्षक और व्यंजक रूप की सीमा कहां तक है इसकी पूरी परख इन्हीं को थी। लक्षणा का विस्तृत मैदान खुला रहने पर भी हिंदी कवियों ने उसके भीतर बहुत ही कम पैर बढ़ाया एक घनानंद ही ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने इस क्षेत्रा में अच्छी दौड़ लगाई है।''

तुम कौन द्यो बाटी पढे हो लला,

मन लेहु पै देहु छटांक नही।

आदि में सभी जगह उनकी पहचान होती है। उदाहरणार्थ –

भोर ते सांझ लों कानन ओर निहारति बाबरी नैकु न हारित।

मोहन सोहन जोहन के लागिये इन आंखिन के उर हारति।

उक्ति वैचित्रर्य काव्य में उक्ति वक्रता के संकेत हैं पर मुख्यतः वक्रता दो ही रूप में होती है वाग्वैदग्ध्य तथा उक्ति वैचित्रर्य।

वाणी जब अपनी सहजता की परिधि से बाहर उठकर कुलाचें भरने लगती है तब विदग्धता का जन्म होता है। विदग्ध उक्ति ऐसे बाण के समान है जो पाठक के हृदय पर चोट किए बिना मानती ही नहीं। जैसे कवि ने अपने उपलाम्भ कथन की भूमिका का निर्माण किया है और अंतिम पंक्ति में पूर्ण आदेश एवं वैचित्रय से संयम करने कथन को कस दिया है।

अति सूधो स्नेह का मारग है

जहां नैकु सयानयप बाक नहीं ।

तुम कौन घों पाटी पढ़े हो लला

मन लेहु पे देहु घटांक नहीं।

मुहावरे व लोकोक्तियां – मुहावरे व लोकोक्तियां जनजीवन में चिरकाल से चलते आ रहे भावपूर्ण एवं चत्मकारपूर्ण प्रयोग होते हैं। इनमें जीवनगत अनुभूतों को अत्यंत संक्षेप में व्यक्त करने की अद्भुत क्षमता होती है। काव्य में स्थान प्राप्त कर ये भाषा की अभिव्यक्ति क्षमता में अपूर्ण वृ(करते हैं। यद्यपि घनानंद का झुकाव लोकोक्तियों की अपेक्षा मुहावरों की ओर अधिक है फिर भी इन्होंने कुछ लोकोक्तियों का अत्यंत सार्थक प्रयोग किया है। उदाहराणार्थ–

जक लगाना, घाय पर नमक होना, तृण तोड़ना, नामक चढ़ाना, दृष्टि छिपाना, पाले पड़ना, बिक जाना, रंग उड़ना, रस लेना, आंखों में आना, आड़े होना, उघड़ कर नाचना, उघड़ पड़ना, गैल रहना आदि का प्रयोग देखने को मिलता है।

3.7.5 रस

घनानंद रीतिकाल के कवि हैं अतः उनके काव्य में श्रृंगार रस की प्रधानता होना स्वाभाविक है। घनानंद के काव्य में श्रृंगार के संयोग व वियोग दोनों पक्ष देखने को मिलते हैं। जिसमें वियोग को ही प्रधानता दी है

लाजनि लपेटि चितवन भेद भाय भरी।

लखित नलित नोत चख तिरछनि चैं।

भौर से सांझ लौं कानन और निहारति बाबरी नैकु न हारति ।

मोहन सोलन जोहन के सनिये इन आंखियन के उर आरति।।

छंद– हिंदी काव्य में आदिकाल में छंदों का विफल प्रयोग हुआ है। दोहा, छप्पय, सवैया और कवित का प्रयोग आदिकाल में प्रचर रूप में हुआ। भक्तिकाल में पद व कवित की प्रधानता थी। रीतिकाल में कवित व सवैया का बड़ा व्यापक्ता प्रयोग हुआ। कवित के मुख्यता दो भेद हैं।

मनहर व घनाक्षरी।

घनानंद का दूसरा मुख्य छंद सवैया है जी कई प्रकार का है।

किरीट–भोर ते सांझ लौं कामन ओर

निहारित बावरी नेकु न हारति।

अरसात–सवरे रूप की रीति अनूप

नयो नयो लागत ज्यों ज्यों निहारियै।

मतगंयद– हीन भये जल मीन अधीन

कहा कछु मो अकुलाने समाने।।

3.76. अलंकार

रीतिकाल से पहले अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग ही अधिकांशतः देखने को मिलता है। रीति कवियों ने तो इस काल में काव्य में अलंकार नहीं अपितु अंलकारों में काव्य ठूंसने की कोशिश की है। कई विद्वानों ने इसे काव्य की आत्मा माना तो कुछ ने इसे आधार पर काल का नामकरण करने का मत रखा। इस काल में रखते हुए भी घनानंद जैसे कवि स्वच्छंद प्रवृति के कहलाए जो सभी प्रकार की बनावट से दूर थे। घनानंद स्वयं कहते हैं–

लोग लागि है कवित बनावत

मोहि को मेरे कवित बनावत।

फिर भी इनके काव्य में आए कुछ अंलकार देखे जा सकते हैं–

विरोधभास– बदरा बरसे रितु में धिरि कें

नित ही अंखियां उधरी बरसें

रूपक– कंठ कांच घटी से बचन चोखा. आसव लै,

अधर पियालै पूरि राखति सहेत है।

अनुप्रास – कारी कूर कोकिसा कहां को बैर काड़ति से

कृति कृकि अवही करैजो किन कोरि लें।

यमक – मानस को बन है जग पै

बिन मानस के बन सौ दरसै सो।

उपमा – साली अधरान की रूचिर मुसक्याम सर्भ,

सब सुख भोर ही सिंदूरा की सी फल है

विभावना – विरह समीर की झकोरन अधीर मेह,

नीर भीज्यौ जीव तऊ गुही लीं उडयौ रहें।

प्रतीप – मीठ दीठि परै खरकत सो किर किरी लौ

तेरे आगे चन्द्रमा कलंकी सो लगत है।

काव्य गुण– काव्य गुणं रस के धर्म हैं और जिनकी स्थिति रस के साथ अचल है। जिस प्रकार मनुष्य में विभिन्न गुण विद्यमान हैं उसी प्रकार काव्य के मूलतः तीन गुण हैं– माधुर्य, ओज एव प्रसाद। माधुर्य गुण अन्तःकरण को आनंद से देवीभूत करता है। इसका रूप श्रृंगार रस में मिलता है। ओजगुण गम को दीप्त करता है, उसमें स्फूर्ति पैदा करता. है। इसका रूप वीर, रौद आदि रसों में मिलता है।

प्रसाद गुण काव्य अर्थ का बोध कराता है। जो प्रायः रसों में रहता है। काव्य गुण की दृष्टि से धनआनंद के काव्य में माधुर्य गुण का ही सर्वाधिक प्रयोग हुआ है। क्योंकि घनानंद मूलतः, विप्रलंभ श्रृंगार के कवि हैं।

3.7.7 शब्द न्यास

घनआनंद ने काव्य पंक्तियों में शब्द इस प्रकार बिठाये हैं कि उन्हें अपने स्थान से विस्थापित नहीं किया जा सकता है। केवल भावहत्या करके ही शब्दों का स्थान परिवर्तन या हरण किया जा सकता है। वर्ण साम्य, ध्वनि साम्य एवं रूप साम्य में कवि ने अपना अपूर्व कौशल दिखाया है, उदाहरणार्थ–

1. गति ढीली सजीली रसीली लखीली, सुजान मनोरम बेलि फलो।
2. अति दीनन की गति हीनन की, पति लीनन की गति के मन है।।

समास प(ति– 'गागर में सागर' भरने की लालसा से विरत होते हुए भी अभिव्यक्ति संक्षिप्सता कषि को अभिप्रेत हो रही है। परिणामस्वरूप घनानंद को भाषा सामासिक प(ति को स्वीकार करना पड़ा है। उदाहरणार्थ–

रूप–बुन–बद उननद नेह–तेह–भरे,

ढक–बल आतुरी चाटक–चातुरी पढे।

गीन–कंज–स्वंजन–कुरंग–मान–भंग करै।

सीचें धनआनंद खुल संकोच सौ गढै।।

अर्थ श्लिष्टता–कवि का मन अनेक ऐसे स्थानो पर रमा है। जहां एकाधिक अर्थश्लिष्ट है। यह द्वयअर्थकता शब्द, पद, पदवाक्य एवं पूरे कवित तक की सीमा में समाहित है। इस श्लिष्ट प्रयोग ने अभिव्यक्ति को विलक्षण बनाया है। उदहारणार्थक 'सुजान' शब्द का अर्थ श्रीकृष्ण भी है और घनानंद की प्रेमिका वेश्या सुजान भी। इसी प्रकार 'घनआनंद' का अर्थ एक ओर आनंद के बादल से है तो दूसरी ओर कवि के नाम से है।

अर्थ दुरूहता – घनआनंद की भाषा एवं नए अगम अर्थो से जाने के कारण आर्थिक दृष्टि से दुरुह हो गई है। भावों की नवीन अभिव्यक्ति प(ति में छंदों में विसष्टता समाहित कर दी है। घनआनंद ने इस अति वैयक्तिक भाषाभिव्यक्ति प्रयोग ने उनके काव्य का जहां अर्थ गांभीर्य प्रदान किया है वहीं दुरूहता, दुर्बोधता जैसे दूषण भी दिए हैं। उदाहरणार्थ–

उन मीन से मौन को घूंघअ के दुरी बैठी विराजति बात बनी।

मृदु मंजु पदारभा भूपन तो सुलसै हुलतै रस रूप बनी।

रखना अली कान गली गध्ि हवै पध्रावसि सै चित सेज ठगी।

घनआनंद बूझनि अंक बसै बिलसै रिझवार सुजान घनी।

उपर्युक्त पद से स्पष्ट है कि केवल 'रिझवार' काव्य मर्मज्ञ ही घनआनंद की बात ;अभिव्यक्तिद्ध रूपी बनी ;दुलहिनद्ध को समझाने में समर्थ है जो मौन का घुंघट ओढ़े एक भवन में विराजमान है।

3.8 सारांश

निष्कर्ष रूप में हम कह सकते है कि घनानंद रीतिमुक्त काव्य धरा के स्वच्छन्द प्रेम के कवि रहे हैं। उन्होंने अपने काव्य में प्रेम की आत्मानुभूति की अभिव्यक्ति की है। उनके काव्य में प्रेम पर सम्पर्ण की भावना का चित्राण मिलता है। उनकी गिनती स्वच्छन्द गायकों में से एक मानी जाती है। प्रेम की उनमुक्ता का इतना विस्तृत चित्राण करने से उन्हें प्रेम का पीर कवि कहा जाता है। उनके काव्य में सयोग और वियोग प्रेम के दोनों पक्षों का चित्राण हुआ है परन्तु अध्कितर वियोग का चित्राण हुआ है।

3.9 व्याख्या भाग

1. बालके अति सुन्दर आनन मौर, छके दुज राजन काननि छवै।

हांहि बोलनि ठवि फलन की बरपा, उन ऊपर जाति है।

लट लोल कपोस करैं, कल कंठ बनी जसजावति है।

अंब–अंब सरंग उठे इति की, परिहै बनौ रूप अबे घर चवै।

प्रसंग – व्याख्यार्थ प्रदत्त पढ रीतिमुक्त काव्यधारा के प्रतिनिधि कवि घनानंद विरचित पदों से लिया गया है। इस सवैये में घनानंद जी नायिका के सौन्दर्य का अत्यन्त हृदयग्राही चित्रा खीचतें हुए कहते हैं कि–

व्याख्या – नायिका का गौर वर्ण चेहरा अत्यधिक चमक रहा है। उसकी बड़ी–बड़ी आंखे मानों कानों को छूती हुई शोभा दे रही हैं। नायिका का हंसना और बोलना तो इतना मोहक हैं मानो फूलों की वर्षा हो रही हो। उसके गालों पर बालों की चंचल लटें क्रीड़ा कर रही है। सुन्दर कंठ में मोतियों की दो लड़ी वाला है। उसके एक–एक अंग से कान्ति की लहरें उठ रही है और ऐसा प्रतीत होता है मानो उसका सौन्दर्य अभी धरती पर चू पड़ेगा :

विशेष–

1. ब्राह्मय रूप आकर्षण का सुंदर वर्णन है।
2. 'फूलों की बरसा होना' जैसे गुहावरों का स्वाभाविक प्रयोग हुआ है।
3. अनुप्रास, रूपक, उत्प्रेक्षा, यमक, छेकानुप्रास तथा पद्‌मैत्राी का प्रयोग प्रष्टव्य है।
4. सुमुखी सवैया है। इसके प्रत्येक चरण में आठ सगंण तथा 24 वर्ण होते हैं।

2. हीन भऐं जल जीन अधीन कह कछु सो अकुलानि समाने।

मीर बनेडी को साय कलंक निरास हवै कायर त्यागत प्राने।

प्रीति की रीति सु क्यों समझे जड़ गीत के पानि परै प्रमाने।

या जन की जु दसा घना आनंद, जीव की जीवनि जाना की जाने।

प्रसंग – यह पद्य 'सुजानहित' प्रसंग में से लिया गया है। इसके रचयिता स्वभव से ही प्रेमी जीव और कवि घनानंद है। निष्ठुर प्रियतम की कठोरता से पीड़ित नायिका अपनी मनोस्थिति का व्यथा की कथा का चित्राण अपनी सखी से कर रही है। उस व्यथा को स्वर, स्वरूप और आकार देते हुए इस पद्य से प्रेमी कवि घनआनंद कह रहे हैं।

व्याख्या– हे सरिव! जिस प्रकार पानी के कम होते जाने पर मछली की व्याकुलता निरंतर बढ़ती ही जाती है उसी के समानं ही प्रिय को दूर होने पर मेरी ये आंखे भी अत्यधिक व्याकुल होकर तड़पने लगती हैं। प्रेमी पानी से प्रेम लंगाने के कारण निराशा के कलंक से कलंकित होकर जैसे बेचारी

मछलियां प्राण त्याग देती हैं उसी प्रकार प्रियतन की निष्ठुरता से पीड़ित और कलंकित ठोकर मेरे यह प्राण मेरा भी साथ छोड़ देना चाहते हैं। किस जड़ स्वभाव वाले प्रिय के हाथ चढ़ने का ही यह प्रमाण होता है कि यह प्रीत की रीति को नहीं समझता अर्थात् जड़ या निष्ठुर स्वभाव वाला प्रिय प्रेम की रीति का निर्वाह न कर निष्ठुरता दिखाया करता है। उस निष्ठुरता का प्रभाव किराना भयावह हो सकता है, वह इस बात को कतई नहीं समझता। कविवर घनआनंद कहते है कि मेरे इस विरही मन की जो दशा है, उसे तो मेरे प्राणों का प्राण सुजान ही जानता है, अन्य कोइ नहीं। भाव यह है कि सच्चा प्रेमी ही वास्तविक प्रेमी की दशा को समझ पाता है।

विशेष –

1. प्रेम विरह की मार्मिकता को उजागर करने के लिए कवि ने पानी–मछली का परम्परागत उदाहरण ही प्रस्तुत किया है।
2. 'मीत के पानि परे' मुहावरे का प्रयोग अत्यन्त सजीव वन पड़ा है।
3. पद्य में उपमा, अनुप्रात यमक और विशेषोक्ति अलंकार है।
4. पद्य की भाषा सहज स्वाभाविक आदि व्यक्ति में रुझान और माधुर्यगुण प्रधान, मुहावरेदार एवं चित्रात्मक है।

3. **पहिले धनआनन्द सीची सुजान कही बतियां असि प्यार–पक्षी।**
अब लाल विशेष की लाय फलाय बढाय बिसास दमानि–दगी।
अखियां दुखियानि कुवानि घरी न कहूं लगै कौन धरी सुलगी।
मति दौरि थकी न लडेठिक ठोर अधेही के मोह–मिठास ठगी।

प्रसंग – यह पद्य रीतिमुक्त कवि घनआनंद विरचित 'सुजानहित' में से लेकर के यहां उ(त किया गया है। प्रिय के निष्ठुर हो जाने पर हर प्रेमी उस घड़ी को कोसा करता है जब उससे पहली बार आंखें चार हुई थी। आलोच्य पद्य में भी प्रेमी जन की इसी प्रकार की पश्चाताप भर मानसिकता का चित्राण करते हुए कवि कह रहा है–

व्याख्या – उस चतुर सुजान या प्रिय ने पहले तो खूब बना संवारकर, अत्यध्कि सुन्दर और प्रेमभाव से भरी हुई मीठी–मीठी बातें भी कहीं। अर्थात मीठी–मीठ बातें करके प्रेम जताने और निभाने के वायद किए पर वह अपनी उन बातों पर स्थिर नही रह सका। अब विश्वासघात रुप दागों से मेरे तन–मन को बुरी तरह से दाग कर उसने मेरे तन–मन में वियोग की आग बुरी तरह से सुलगा दी है। इस प्रकार मेरे जीवन के लिए उस विश्वासघाती प्रिय ने मुसीबत ही मुसीबत खड़ी कर दी है। अर्थात पहले प्रेम बढ़ाकर निभाने के वायदे किए, पर फिर मुंह गोड लिया। इस कारण मेरे लिए प्रिय के वियोग की आग में जलसे रहना एक भयावह गुसीबत बन कर रह गया है। अब मेरी दशा बहुत ही दयनीय एवं कष्टदायक हो गई है। क्योंकि मेरी आंखों को तो हर समय प्रिय को देखते रहने की बुरी आदत पड़ चुकी थी। पर अब वह दिखाई ही नहीं देती। सो मैं अपने आंखें कहीं और लगाने की चेष्टा करता हूं। पर ये आंखें अन्यत्रा कहीं लगती या ठहरती ही नहीं। पता नहीं किस बुरी घड़ी में ये आंखे पहली बार उस निर्मोही प्रिय से लगी थीं कि अब इन्हें इतना कष्ट झेलना पड़ रहा है। मेरी बु(ि दौड़–दौड़कर अर्थात् तरह–तरह के प्रयत्न कर–करके थक हार गई है कि ये आंखें कुछ दूसरा ध्यान करे। पर नहीं, उस विश्वासघाती प्रिय के रुप माधुर्य और मीठी बातों से ठगी हुई वे आंखें अब और कहीं लगती ही नहीं। एक पल भी चैन नहीं पाती।

विशेष –

1. प्रेम में पडे सच्चे प्रेमी की मानसिकता और प्रिय दर्शन की प्यासी आंखों का सजीव, यथार्थ और मार्मिक वर्णन किया गया है।

2. 'अति प्यार पगी' 'बिसास दगानि दगी', 'कौन घरी सु लगी' और 'मोह मिठास ठगी' जैसे कहावतों का उचित, सार्थक एवं प्रभावी प्रयोग किया गया है।

3. आंखों की विकारता का यथार्थ और सार्थक चित्राण विशेष दर्शनीय है।

4. पद्य में यमक, अनुप्रास, उपक, अनन्वय, आदि कई अलंकारों का सार्थक एवं सौन्दर्य प्रभाव–व(्क प्रयोग किया है।

5. भाषा माधुर्य गुण से संवत, सतत प्रवाहचयी, संगीतात्मक, चित्रागण एवं मुहावरेदार है।

4. क्यों हंयि हेरि हरयो हियरा अस क्यों हित के चिल चाह बढ़ाई।

काहे को बोलि सुधासने बैननि चैननि मैन निसेन चढ़ाई।

सो बुधि मो हिम मैं ध्नआनंद सालनि क्यों हूं कड़े न कढ़ाई।

नीत सुजान अनीति की पाटी इतै यै न जानिए कौन पढ़ाई।।

प्रसंग – यह पद्य स्वभाव से ही प्रेमी कवि धनआनंद की रचना 'सृजानहित' में से लिया गया है। प्रेम विरह में बीती बातें और घटनाएं याद आकर नरश्चेतना को पीड़ित किया करती हैं। इस पद्य में भी विरही नायक अतीत का स्मरण कर प्रिया की निष्ठुरता पर टसुए बिखरा रहा है। प्रिया की निष्ठुर की दुहाई का वर्णन करते हुए इस पद्य में कवि कह रहा है।

व्याख्या – ओ निष्ठुर प्रियतमें पहले तुमने हंसकर मेरा मन क्यों हर लिया था जो आज इस वियोग की आग से पीड़ित ही करना था, तो पहले हंसकर मन में प्रेम का भाव क्यों जगाया था, तो प्रेम करके मेरे मन में अनेक प्रकार की मधुर मिलन की कामना से भरी इच्छाएं ही क्यों जगा और बढ़ा दी थी। कुछ तो सोचना था। तुमने पहले मीठी–मीठी प्यार भरी बातें कर मेरे मन को कायरता की सीढ़ियों पर क्यों पढ़ा दिया अर्थात् तुम्हारी अमृत समान मधुर बातों में आकर मैंने तुम पर विश्वम किया? तुम्हें लेकर मन में तरह–तरह की कल्पनाएं और भावनाएं जगाई इसी कारण मात्रा तुम्हारा विछोड़ा अलग हो रहा है। तुम्हारे हंसकर बोल लेने, फिर प्यार से मीठी–मीठी बातें करने की याद आज भी रह–रहकर मेरे मन में चुभने और पीड़ित करने लगती है। मैं उन दावों को उस प्रेम के भावों को अपने मन से निकाल देना चाहता हूं पर प्रयत्न करने पर भी भूल और निकाल लाने में सफल नहीं हो पा रहा?

हे प्रिय सुजान! पहले सुमने मुझसे प्रेम किया और अब वियोग की पीड़ा देकर अन्याय कर रही हो। प्रेम में तो ऐसा सब नहीं चलता। पता नहीं तुमको प्रेम व्यापार में इस प्रकार उपेक्षा करने की अनीति का पाठ किस बेरहम ने पढ़ा दिया है कि जो सब कुछ भूल–भूलाकर इतनी निष्ठुर बन गई हो। अपने प्रेमी को इस कठोरता से पीड़ित एवं निराश कर रही हो।

विशेष–

1. पद्य विप्रलब्ध श्रृंगार का एक अच्छा उदाहरण कहा जा सकता है। विरहजन्य पीड़ा की अनुभूति सजीव–साकार हो उठी है।

2. पद्य में उपालम्भ का भाव भी स्पष्ट है विगत की स्मृतियां जाग जागकर प्रेमियों की पीड़ा और विराट भाषमा को ध्ड़काने वाली होती हैं यह भी स्पष्ट है।

3. पद्य में उपना, उल्लेख, प्रश्न, अनुप्रास आदि कई अलंकारों की चमत्कारपूर्ण स्थिति बड़ी स्वाभाविक बन पड़ी है।

4. पद्य की ब्रजभाषा चलती, सजी, मधुर, और संगीतात्मक गुणयुक्त है। उसमें माधुर्य गुण की प्रधानता चित्रामता एवं गत्यात्मकता भी स्पष्ट देखी जा सकती हैं।

5. **प्रीतम सुजान मेरे कित की निधन कहौ,**

कैसे रहैं प्रान जौ अनखि अरसाय हौ।

तुम तौ उदार दीन–हीन आनि परयौ द्वार,

सुनियै पुकार याही कौ सौ तरसाव हौ।

चातक है रावरो अनोखे मोह आयरौ,

सुजान रूप बावरो बचन दरसाय हौ।

विरह नसाय दया हिये में बसाय आय,

हाय कब आनन्द को घन बरसाथ हौ।

प्रसंग – यह पद्य कविवर घनआनंद की रचना 'सुजानप्रेम' में लिया गया है। प्रेमी का मन चातक बनकर अपने प्रिय का नाम रटता है। हर समय प्रिय दर्शन की अभिलाषा में भरा–पूरा और मुखरित रहा करता है। व्याख्येय पद्य में कुछ इसी प्रकार के भाव एवं विचार प्रकट करते हुए कवि–घनआनंद कहते है–

व्याख्या– हे मेरे प्रेम के भण्डार या आधार प्रिय सुजान! यदि तुम इस प्रकार जान या हठ कर अड़े रहोगे तो मेरे प्राण कैसे रह पाऐंगे, यह बात मुझे तुक ही बता दो अर्थात तुम्हारे प्रेम और मानने के अभाव में मेरे कभी भी इस शरीर में नहीं रह सकते, यह एक तथ्य है।

हे प्रियतने! तुम तो बड़े ही उतार स्वाभाव वाली हो। मैं हर प्रकार से दीन–हीन हूं। इसलिए तुम्हारी प्रेम भरी दृष्टि के प्रभाव से अपनी दीन–हीनता दूर करने की इच्छा लेकर तुम्हारे द्वार पर आ पड़ा हूं। अब दया करके मेरी विरही मन की पुकार सुनकर मेरी तरफ ध्यान दो। कब तक मेरे प्रति निष्ठुर बनकर मुझे सताती धीर तरसाती रहोगी। मेरा मन तो तुम्हारे विलक्षण प्रेम रूपी स्वाति नामक बादल के लिए तरसता, व्याकुल होता हुआ चातक–समान है। अपने मस्त सौन्दर्य की एक अलक इस प्यासे चातक को अवश्य दिखा दो। वह उसे पाने के लिए तुम्हारे दीदार को लिए जा कब से व्याकुल होकर तड़प और सरस रहा है।

कविवर घनआनंद कहते है कि कब तुम अपने मन में मुझे व्याकुल के प्रति दया का भाव भरकर, मुझे अपने मन में बसाकर अपना दर्शन दे, अनन्दरूपी बादलों की वर्षा कब तक करोगे? अर्थात् तुम्हारी प्रेम दयाभरी दृष्टि ही मेरी सारी व्याकुलता दूर कर आनन्द की सृष्टि कर सकती है।

विशेष–

1. प्रेमीजन की विरह व्यथाजन्य हीनता का भाव विशेष द्रष्टव्य है। उसकी विनती भरा स्वर भी उल्लेख है।

2. इस पद्य का अध्यात्मपरक या भक्तिपरक अर्थ भी सहज ही लगाया जा सकता है।

3. 'घातक' की प्यास का परम्परागत काव्यरूढ़ि के रूप में प्रयोग किया गया है।

4. 'आनन्द को धन' पद्य में कवि का नाम तो है ही, स्वाति नायक के बादल को भी संकेत है, जो 'चातक' की रूढ़ि के प्रयोग को सार्थक बनाता है।

5. पद्य में उपमा, रूपक, उदाहरण और अनुप्रास अंलकार हैं विप्रलम्भ का भाव और रूप भी स्पष्ट अब देखा जा सकता है।

6. भाषा माधुर्य गुणात्मक, प्रवाह और चित्रामयी होने के साथ–साथ संगीतात्मक भी है।

6. सब तो कवि जीवत जीवन है सब सोधन लोचन जात जरे।

हिग घोष के तोप जु पान पले विलास सु यों दुख–दोष–भरै।

घनआनंद प्यार सुजार बिना सब ही सुख साज समाज टरे।

तब हार पहार के लालब है अब आनि के बीच पछार परे ।।

प्रसंग – यह पद्य कविवर घनआनंद विरचित 'सुजानहित' में से लिया गया है। प्रिय के साथ प्रेम के समय संयोग और वियोग के क्षणों में क्या अन्तर हुआ करता है। अपने व्यापक अनुभव के आधार पर उस व्यापक अन्तरात को इस पद्य में सहज कथात्मक ढंग से अभिव्यंजित करते हुए कवियर घनआनंद कर रहे है–

व्याख्या – हे प्रिय! सब सुन हमसे प्रेम करते और हमारे पास राज करते थे। तब हमारे जीवन का आधार तुम्हारी सुन्दरता थी। अर्थात् तुम्हारे रूप सौन्दर्य को देखकर ही निकट अतीत में हम जिया करते थे। किन्तु अब यह दशा हो गई है कि तुम्हारे दूर हो जाने के कारण उन बीते दिनों की चाह में ही चिंता की मारी आंखें जली जा रही है। तुम्हारे प्रेम भरे ह्रदय द्वारा पोषित होकर हमारे प्राण पले थे, पर अब तुम्हारे द्वारा हमें अपने ह्रदय से निकाल देने के कारण हमारे प्राण दुख–दोष से भरकर हमेशा रोते बिलखते रहते हैं।

कवि घनआनंद कहते है कि उस प्राणप्रिय सुजान ;प्रियतमद्ध के अभाव में हमारे पास कभी जितने भी सुख के साध्न हुआ करते थे, आज ये सारे दुखदायी एवं विनष्ट हो गए हैं। किसी भी सुख साधन का कोई उपभोग एवं किसी भी प्रकार का आनन्द हमारे उपेक्षित जीवन में अब बाकी नहीं रह गया है।

हे निष्ठुर प्रिय! जब तुम पास थे तन–मन में इतनी कोमलता, इतनी नजाकत थी कि फूलों के हार भी शरीर के पहाड़ के समान भारी प्रतीत हुआ करते थे पर विधि का निष्ठुर प्रिया तो देखाॠ अब हमारे प्रेम–सम्बन्धों के बीच पहाड़ आ खड़े हुए हैं। अर्थात भारी बाधाएं और भीषण रूकावटें आज हमें आपस में मिलने तक नहीं देती। समय और जीवन समाज की यह कैसी विडम्बना है, विषमत्ता है।

विशेष–

1. सामान्य जीवन में ही जब अतीत मोहन हुआ करता है, तब प्रेषियों के जीवन में तो अतीत के हर क्षण का सूक्ष्म एवं महत्व विशेष चढ़ जाया करता हैॠ वह स्पष्ट है ।

2. पद्य में उपमा, रूपक, स्मरण, अनुप्रास आदि अलंकारों की सहज छटा विद्यमान है।

3. पद्य की भाषा माधुर्य गुण से संवत, सानुप्रासिक, नत्मात्वक एवं सहज सरल है। इसमें चित्राात्मकता का गुण भी विद्यमान है।

7. पहले अपनाव सुजान सनेह सौं क्यों फिरि नेह कै सोरियै जू।

निरधार अधार दे धार–मंझार दर्द मही बांड न वोरिये जू।

घनआनंद अपने जातक कौ जुम–वांधि से पौछन छौरिये जू।

रस पश्य के ज्याय बढ़ाय के आस विसाय मैं यों विष छेरियै जू।।

प्रसंग – यह पद्य कविवर धनाआनंद विरचित 'सुजानहित' नानक रचना से लिया है। प्रेम में विश्वासघात अच्छा नहीं होता है। सहारा देकर हाथ खेंच लेना अनीति एवं अनुचित व्यवहार है, इस प्रकार के विचारों और भावों को इस पद्य में सहज सरल सरल एवं कलात्मक ढंग से प्रतिपादित करने हुए कवि कह रहा है।

व्याख्या– हे प्रिय सुजान! पहले तो तूने अपने इस प्रेमी को प्रेम भाव से अपनाया, यानि प्रेम बंधन में बंधकर हर प्रकार से अपना बनाया, पर अब पता नहीं किस कारण क्रोध करके उस सम्बन्ध को तोड़ डालना चाहती हो। वह तो उचित एवं प्रेम–पक्ष की नीति के अनुकूल व्यवहार नहीं कहा जा सकता। मेरा जीवन प्रेम के मामले में एकदम निराश्रय था, फिर तुमने मेरे मन को अपने प्रेम का आनन्द आधार प्रदान किया। अर्थात मुझे अपना बनाकर मेरे बेसहारा भटक रहे जीवन को एक तरतीब, एक जीवन की इच्छा प्रदान की। मेरे जीवन को मंझधर में डूब जाने से बचा लिया। अर्थात् मुझे यों ही समाप्त नहीं हो जाने दिया। फिर अब ऐसी क्या बात हो गई है कि जो मेरी बांह पकड़ मुझे मंझधार करके मेरे जीवन को नष्ट कर देने पर क्यों तुल गए हो?

कवि कहता है कि हे आनंद के घन ;बादलद्ध। अपनी स्वाति नक्षत्रा में बरतने वाली प्रेम–रखनी बूंद के प्यारे इस प्रेमरूपी चातक को अपने गुण– प्रेमरूपी रस्सी या होर में बांधकर अब यों ही छोड़ क्यों देना चाहते हो? अर्थात् जिसे प्रकार स्वाति–जल को छोड़कर प्यासा चातक और कोइ जल पीकर अपनी प्यास नहीं बुझा सकता, उसी प्रकार मेरा मन भी तुम्हें छोड़कर और किसी से प्रेम नहीं कर सकता। ऐसी दशा में क्यों मुझे छोड़कर प्यासा ही मार देना चाहती हो? कुछ कारण भी हो तो पता चले। पहले तो मुझे अपने प्रेम का रस पिलाकर मुझे जीवनदान दिया, अपने व्यवहार से मेरे जन में मिलन की आशाएं लगातार बढ़ाई फिर क्या कारण है कि जो मेरे विश्वास में विष घोल देना चाहती हो? अर्थात् प्रेम में विश्वासघात करके प्रेमी का जीवन नष्ट करना चाहती हो, आखिर कहां की नीति और कहां का न्याय है जो तुम इतनी कठोरता करने पर तुल गई हो।

विशेष–

1. पद्य में विप्रलम्भ और उपालम्भ का भाव मुख्य तो है ही, पूर्ण तथा स्पष्ट प्रस्वर और प्रभावी भी है। उसमें सहज यथार्थ भी दर्शनीय है।
2. पद्य में उल्लेख, वर्णन, रूपक, श्लेष, अनुप्रास, और दीप्ति नामक अलंकार भी है।
3. पद्य की भाषा सहज स्वाभाविक, माधुर्य– गुणप्रधान, संगीतात्मक, सचित प्रवाहमयी और भावाभिव्यक्तियों में पूर्णतय समर्थ है।

8. **रावरे रूप की रीति अनूप नयो नयो लागत ज्यों–ज्यों निहारियै।**

त्यौं इन आंखिन बानि अनोखी अधानि कहूँ नहिं आन निहारियै।

एक ही जीव हुतौ सुतौ वारयो सुजान सकोच और सरेच सहरियै।

रोकी रहे न दहैं घनानंद बावरी रीड़ा की हाधिनि हारियै।

प्रसंग – यह पद्य कविवर घनानंद विरचित 'सुजानहित' में से लिया गया है। प्रेमी जनों से प्रेम की जान कभी भी हार मानना नहीं जानती। सर्वस्व न्यौछावर करते भी वह प्रिय को ही पाना चाहती है।

कुछ इसी प्रकार के भाव और प्रेमी जनों की अकाट्थ मर्यादा का इस पद्य में वर्णन करते हुए प्रेमी कवि कह रहा है।

व्याख्या – हे प्राण प्रिय! सुम्हारे रूप–सौन्दर्य की यह अनोखी रीति और परम्परा देखी है कि उसे जब–जब और जहां–जहां भी देखा, पहले की तुलना में 'वह हमेशा कहीं अधिक नया कहीं अधिक सुंदर एवं आकर्षक प्रतीत होता है। अर्थात् प्रिय का रूप–सौंदर्य दिन एवं आयु के बीतने के साथ–साथ घटने की बजाए निरंतर बढ़ता और निखरता ही जाता है। यह उसके रूप सोन्दर्य की एक अनुपम विशेषता है।

कवि कहता है, हे प्रिय! जिस प्रकार तुम्हारे रूप को नित नया होते जाने की आदत है। उसी प्रकार मेरी इन आंखों को भी यह अनुपन आदत पड़ गई है। कि तुम्हें छोड़कर अन्य किसी को भी देखकर कभी तृप्ति एवं संतोष नहीं पाती। अर्थात बार–बार तुम्हें देखकर संतुष्ट होने की पक्की एवं अनोखी मेरी इन आंखों को भी पड़ गई है। मेरे पास तो मेरा एक ही मन–प्राण था, वह मैंने तुम्हारे प्रेम पर न्यौछावर कर दिया है।

हे सुजान प्रिय! अब संकोच सयाग कर मेरे चिंता भरे मन को सहारा दो। अर्थात मेरे प्रेम का प्रतिपादन चुकाकर मेरी चिंता दूर करो। घनआनंद कहते है, कि तुम्हें देखने से रोकने पर भी मेरी आंखें और रीझ का भाव रूक कर मेरे वश में नहीं रह पाते। पगली रीझ के वश में पड़कर मैंने तो अब अपनी हार स्वीकार कर ली है। अर्थात तुम्हें देखे बिना यह मन आंखे रह नहीं सकते। सो इन्होंने अपना अस्तित्व मिटाकर भी तुम्हारे प्रेम के पालन का प्रण पाल लिया है। तुम्हीं उसकी रक्षा कर सकते हो।

विशेष –

1. कवि ने सौन्दर्य की अविरत गतिशीलता का बखान किया है। वह सौदर्य निश्चय ही विशिष्ट होता है।
2. सच्चे प्रेमी–मन की दृढ़ता भी दर्शनीय एवं उल्लेख्य बन पड़ी है।
3. पद्य में उत्प्रेक्षा, वर्णन, विशेषोक्ति, अनुप्रास आदि अलंकार है।
4. भाषा माधुर्य–गुण से संवत संगीतात्मक एवं प्रवाहमही है।
5. एक ही जीवन हुतो सो तौ मारयौ' पद पर भक्तिकालिन कवि सूरदास का स्पष्ट प्रभाव देखा जा सकता है– ''उध्रे मन नहीं दस बीस। एक हुतो सो गयो स्यान मन संग''।

3.10 कठिन शब्दावली –

झलकै – झलकता है। आनन–मुख। काननि छव – कानों तक छुटी है। लट–लोट – चंचल लटें। जल जावलि – मोतियों की माला। हीन भय जल – जल से अलग होकर। यानिपरे – हाथों में। दर्शान दागी – छल–कपट से जलाया। हौरि थकी–विचार करते–करते थक गई। निधन – आधर। अनखि – रूठकर। अरसाप हौ – आलस्य करोगे। रावरे – आपके। बानि – आदत। अधनि – तृप्ति। दहै – जलाती है।

3.11 स्वयं आकलन प्रश्न

1. रीतिकाल का समय लिखें।
2. रीतिकाल की धराएं लिखें।
3. घनानंद रीतिकाल की किस धरा से सम्बन्ध रखते हैं।

4. घनानंद का जन्म लिखिएं।

5. घनानंद की किसी एक रचना का नाम लिखों।

3.12 स्वयं आकलन प्रश्नो के उतर

1. उतर – सम्वत् 1700 – सम्वत् 1900

2. उतर – 1. रीतिब(2, रीतिसि(3. रीतिमुक्त

3. उतर – रीतिमुक्त

4. उतर – सम्वत् 1746

5. उतर – सुजान हित

3.13 सन्दर्भित पुस्तक

1. घनानंद – डॉ. लल्लन राय।

2. घनानंद का काव्य – डॉ. रामदेव शुक्ल।

3. घनानंद की काव्य साध्ना – डॉ. सभापति मिश्र।

4. घनानंद और स्वच्छंद काव्यधरा – डॉ. मनोहर लाल गौड़।

3.14 सात्रिाक प्रश्न

1. घनानंद का जीवन परिचय लिखिएं।

2. घनानंद का साहित्यिक परिचय बताएं।

3. घनानंद का साहित्यिक विशेषता लिखों।

4. घनानंद का काव्य सौन्दर्य स्पष्ट करें।

खण्ड – चार

बिहारी और उनका काव्य

4.1 भूमिका

4.2 उद्देश्य

4.3 बिहारी का जीवन परिचय

4.4 बिहारी और सतसई परम्परा

4.5 बिहारी का काव्य सौन्दर्य

- 4.5.1 सफल मुक्तक
- 4.5.2 उत्कृष्ट सयोग वर्णन
- 4.5.3 रस विधन
- 4.5.4 मार्मिकता
- 4.5.5 विलासिता
- 4.5.6 विषयों की विविध्ता
- 4.5.7 समाहार शक्ति
- 4.5.8 अलंकार सौन्दर्य

4.6 बिहारी के काव्य में श्रृंगार वर्णन

- 4.6.1 सयोग श्रृंगार का वर्णन
- 4.6.2 वियोग श्रृंगार का वर्णन

4.7 बिहारी सतसई में वर्ण्य विषय का चित्राण

4.8 बिहारी की बहुज्ञता का वर्णन

- 4.8.1 ज्योतिष का ज्ञान
- 4.8.2 आजुर्वेद का ज्ञान
- 4.8.3 दार्शनिकता
- 4.8.4 पौराणिक ग्रंथ का ज्ञान
- 4.8.5 कृषि का ज्ञान
- 4.8.6 संगीत का ज्ञान
- 4.8.7 कला का ज्ञान
- 4.8.8 अलंकार का ज्ञान
- 4.8.9 शब्द ज्ञान

4.8.10 अनुभाव ज्ञान

4.9 बिहारी की अनुभाव योजना

4.10 बिहारी की काव्य कला

4.10.1 उत्कृष्ट पद संघटना

4.10.2 समास प(ति

4.10.3 वैदग्ध्य की नियोजना

4.10.4 अनुभाव की योजना

4.10.5 वर्ण योजना

4.10.6 शु(भाषा का प्रयोग

4.10.7 अलंकार

4.10.8 रस

4.10.9 ध्वनि

4.11 सारांश

4.12 व्याख्या भाग

4.13 कठिन शब्दावली

4.14 स्वयं आकलन के प्रश्न

4.15 स्वयं आकलन प्रश्नों के उतर

4.16 सन्दर्भित पुस्तक

4.17 सात्रिाक प्रश्न

4.1 भूमिका

बिहारी रीतिकाल के कवियों में महत्वपूर्ण हैं। बिहारी ने अपनी एक रचना के द्वारा ही यह दिखा दिया कि कवि की सफलता परिणाम से नहीं, गुण से होती है। 'अर्थ अमित अति आखर धोर' की उक्ति उन पर सही लागू होती है अनेक कवि उस समय हुआ, जिन्होंने बिहारी से अधिक गंधें की रचना की परन्तु उन्हें वह प्रसि(नहीं मिली, जो बिहारी को प्राप्त हुई।

4.2 उद्देश्य

1. बिहारी के जीवनवृत की जानकारी।
2. बिहारी सतसई के सम्बन्ध में जानकारी।
3. बिहारी के काव्य सौन्दर्य का ज्ञान।
4. बिहारी सतसई में प्रयोग भाषा की जानकारी।
5. रीतिकाल में बिहारी तथा बिहारी सतसई के योगदान की जानकारी।

4.3 बिहारी का जीवन परिचय

बिहारी का संवत् 1652 में हुआ था। इनके जन्म के बारे में सही मान कम ही है। अधिकतर विद्वान ग्वालियर के वसुआ गोविन्दपुर गांव में उनका जन्म स्थान मानते हैं। इनके पिता का नाम केश्वराय था। बहुत से विज्ञान यह मानते है कि केश्वराय ही रीतिकाल के प्रसि(आचार्य केशवदास थे, किन्तु यह अधिक प्रमाणिक प्रतीत नहीं होता। इनके पिता निम्बार्क सम्प्रदाय के नरहरि दास के शिष्य थे। उन्हीं के यहां बिहारी ने संस्कृत और प्राकृत काव्य ग्रंथों का अध्ययन किया था। इनका बचपन बुन्देलखंड में बीता, परन्तु बाद में वृन्दावन चले गये। विवाह के बाद ये अपनी ससुराल मथुरा में रहे। उनके बारे में यह दोहा प्रसि(है –

जन्म ग्वालियर जानिये, खण्ड बूंदेले चाल।

तरनाई आइ सुधर, मथुरा बसि ससुराल।।

मुगल बादशाह शाहजहां ने पुत्रा जन्मोत्सव पर इन्हें आगरा बुलाया। वहां बहुत से नरेशों को इन्होंने अपनी कविता में इतना प्रभावित किया कि अनेक राजाओं ने इनके लिए वृत्ति बांध दी।

बिहारी के कोई संतान नहीं थी। कहा जाता है कि इन्होंने एक बालक को गोद लिया था, जिसका नाम था– निरंजन कृष्ण विद्वानों के विचार से बिहारी सतसई की टीका लिखने वाले कृष्ण कवि उनके पुत्रा ही थे। इनकी मृत्यु संवत् 1720 में हुई।

बिहारी एक बार जब जयपुर नरेश के यहां अपनी वृत्ति लेने गए तो उन्हें पता चला कि महाराज अपनी नवोढ़ा. पानी के प्रेम में इतने नग्न है कि राजकार्य की सुधि की भूल चुके हैं। बिहारी ने निम्न दोहा लिखकर राजा के पास भेजा –

महिं पराग, नहिं बघुर वधु नहिं विकास इहिं काल।

अली! कली ही सो विधयौं आने कौन हवाल।।

इस दोहे का राजा पर बहुत प्रभाव पड़ा और वह राजकाज में चित लगाने लगे। राजा ने प्रत्येक दोहे पर उन्हें एक अशर्फी देने को कहा। बिहारी राजकावे के रूप में उनके यहां रहने लगे। बिहारी ने एक भाग 713 दोहों की सतसई लिखी जो अपने में अमूल्य है।

4.4 सतसई परंपरा और बिहारी सतसई

'सतसई' शब्द के लिए 'संतसैया' शब्द भी चलता है लेकिन ये शब्द और परंपरा हिंदी में संस्कृत प्राकृत से आई है। संस्कृत प्राकृत में 'सप्तशती' और 'सप्तशतिका' शब्द मिलते हैं। 'सतसई' का अर्थ है सात सौ छंद का संग्रह करने वाली। संस्कृत वाड्मय में सप्तशती शैली के अनेक बंध उपलब्ध हैं। मार्कण्डेय पुराण के अंतर्गत 'दुर्गासल्पशती तथा महाभारत के अंतर्गत 'श्रीमद्भागवद्गीता' के श्लोकों की संख्या सात सौ है। शु(साहित्यिक स्तर पर सप्तशत अथवा सतसई परम्परा के प्रवर्तन का श्रेय प्राकृत में संकलित कवि डाल कृत 'गाहा सतसई' ;गाथा सप्तशतीद्ध को है। बाद में इसी के अनुकरण पर गोवर्धनाचार्य ने आर्या सप्तशती' का संकलन प्रस्तुत किया।

हिंदी की सतसई परम्परा संस्कृत प्राकृत की ट्टणी हैं। फिर भी इन दोनों में एक अंतर उल्लेखनीय है। संस्कृत प्राकृत की सतसइयों में विभिन्न कवियों के मुक्तक के साथ थे और सतसई का नामकरण उनमें अलग– अलग है और उनकी सतसई के नाम भी उनके नाम पर ही आधारित है। हिंदी की रचित सतसइयों में एकमात्रा साम्य यह है कि इन सभी में दोहा छंद का प्रयोग हुआ है। विषय वस्तु, इस व्यंजना शिल्प विधान की दृष्टि से प्रत्येक सत्तसई का अपना निजी वैशिष्ट्य है। उदाहरणार्थ

तुलसी और रहीम की सतसईयां भक्ति प्रधान है तो बिहारी, रसनिधि की सतसइयां श्रृंगार प्रधान और वृंद बुधजन ने सतसइयां नीति प्रधान है। प्रायः सभी सतसइकारों की राजभाषा का प्रयोग किया है।

हिंदी का प्रमुख सतसइयां कुछ इस प्रकार है – तुलसी सतसई ;तुलसीदासद्ध, रहीम सतसई ;रहीमद्ध, वृंदविनोद सतसई ;वृंदद्ध, पनक सतसई ;वृंदद्ध, अलंकार सतसई ;वृंदद्ध, बुधजन सतसई ;बुधजनद्ध, बिहारी सतसई ;बिहारीलालद्ध, अतिराम सत्सई ;अतिरामद्ध, भूपति सतसई ;भूपतिद्ध, रसनिधि सतसई ;रसनिधिद्ध, विक्रम सतसई ;विक्रम साहद्ध, राम सतसई ;राम सहायद्ध, चंदन सतसई ;चंदनद्ध, वीर सतसई ;सूर्यमल्लद्ध, आनंद प्रकाश सतसई ;दलसिंहद्ध, दयाराम सतसई ;दयारामद्ध, हरिऔध सतसई ;अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'द्ध, वीर सतसई ;वियोगि हरिद्ध, किसान सतसई ;जगत सिंह सेंगरद्ध, ज्ञान सतसई ;राजेन्द्र शर्माद्ध, ब्रज सतसई ;रामचरित उपाध्यायद्ध, अमृत सतसई ;अमृतलालद्ध, मोहन सतसई ;मोहन सिहद्ध, आर्य सतसई ;ब्रजभूषण आर्यद्ध आदि।

हिंदी की रामकाव्य परम्परा में जो स्थान तुलसीकृत 'रामचरितमानस' का है कृष्णाकाव्य परम्परा से सुरदास कृत 'सूरसागर' का है वही स्थान हिंदी का सतसई परम्परा में बिहारी का है। इनकी सतसई की विशिष्टता के अनेक कारण हैं– बिहारी ने अपनी सतसई में किसी एक विषय को नहीं, विभिन्न विषयों को एक साथ मिला लिया है तभी वे कहते है– 'करि? बिहारी सतसई, भरे अनेक स्वादु'।

अनुभूति की विविधिता के साथ–साथ इनकी अभिव्यक्ति भी विशिष्ट रूप में उभरी है। सौन्दर्यबोध, रसबोध, रंगबोध, अलंकार कौशल, समाहारता, वाग्विदग्धता, अनुभाव योजना, बिंबात्मकता आदि श्रेष्ठ गुण उनकी सतसई को गौरवान्वित करते हैं तभी उनके समकालीन कवि ने उनकी सतसई की प्रशंसा में कहा है–

सतसैवा के दोहरे, ज्यों नावक के सीर।

देखन में छोटे लगैं, घाव करें गंभीर।।

बिहारी सतसई की उपर्युक्त सभी विशेषताओं का अगले विषय 'बिहारी का काव्य सौन्दर्य' में विस्तार से समझाया गया है। जिससे बिहारी और उनकी सतसई की विशिष्टता स्वतः ही सर्वविदित हो जाती है।

4.5 बिहारी का काव्य सौन्दर्य

रीतिकालीन रीतिसि(कवि बिहारी की लोकप्रियता, उनके काव्य सौन्दर्य का गुण उनके मुतक काव्य के कारण है। उन्होंने मुक्तक को आधार बनाकर अपने काव्य सौन्दर्य में चार चांद लगाए हैं। इनके दोह हिंदी जंगल में लोकप्रिय हुए जिसका कारण इन दोहों की गंभीरता, कसावट, अर्धग्रहण की क्षमता और सुक्ष्मातिसूक्ष्म विषय वस्तु हैं। इनके दोहों की महत्ता को समझने के लिए इनकी निन्न रूप से समीक्षा की जा रही है।

4.5.1 सफल मुक्तक

बिहारी के दोहे उत्कृष्ट कोटि के मुक्तक हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार 'मुक्तक कविता में जो गुण होना चाहिए।

मुक्तक सौन्दर्य–मुक्तक की सफलता कवि की उमाहार शक्ति पर निर्भर करती हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार जिस कवि में कल्पना की समाहार शक्ति के साथ–साथ भावों की समाहार शक्ति जितनी अधिक होगी, उतना ही यह मुक्तक रचना में सफल होगा। यह क्षमता बिहारी में पूर्णतः विद्यमान थी। इसीलिए छोटे–छोट दोडों में बिहारी ने इतना रस, इतना गड़न अर्थ भर दिया है कि वह पदों में भी समाया नहीं जा सकता। जैसे –

तंत्रीनाद कवित रस सरस राग रति रंग।

अनबूढै बूढै तरै जे बूकै सब अंग

अनुभावों का विधान– बिहारी की रस व्यंजना का पूर्ण वैभव उनके अनुभवों के विधान में दिखाई देता है। इस विधान में इनका अनुभव, कल्पना सहज हो दृष्टिगत होते हैं। उदाहरणार्थ–

कहत नटत रीझत खिजत मिलत खिलत लजियात।

भरे भौनु में करत है नैननु की सौ बात।।

4.5.2 उत्कृष्ट संयोग वर्णन

बिहारी के दोहों में श्रृंगार के संयोग पक्ष का वर्णन, भावों की सुकुमारता के साथ अत्यंता सजीव रूप में हुआ है। जिनमें मधुरता, सौन्दर्य, सुकुमारता, मार्मिकता एवं मादकता का भाव एक ही प्रस्फुटित होता है –

दोऊ चाह भरे कछु चाहत कह्यो कहे न।

नहिं जाचकु सुनि सूग, तो बाहिर निकसत बैन।।

4.5.3 रसं विधान

बिहारी के दोहों में अनुपम योजना रस की योजना के दर्शन होते हैं। इसमें आद्योपात रस का ही विधान है। इस दोहों में श्रृंगार रस के स्थायी भाव 'रति' से लेकर सम्पूर्ण आलम्बन एवं उद्दीपन विभाव, अनुभाव एवं सचारी भाव का वर्णन हुआ है।

4.5.4 धार्मिकता

बिहारी के दोहों की लोकप्रियता का एक अन्य कारण उसकी मार्मिकता है। इनकी सतसई में श्रृंगार, भक्ति एवं नीति संबंधी, विषयों की अत्यंत स्वभाविक एवं मार्मिक भावाभिव्यजना हुई है। उदाहरणार्थ–

डोमती कहत सुख कामना तुमरे विलन की लाल।

4.5.5 विलासिता

ऐसा देखा जाता है कि भक्ति भावना, मानवीय संवदेना, आदर्श की भावना, ज्ञान भवना आदि की गहन भावाभिव्यक्ति की ओर मानव मन श्रृंगारिक भावों की अपेक्षा कम उन्मुख होता है। इनके काव्य में कामुकतापूर्ण विलासिता की अभिव्यक्ति हुई है।

उक्ति वैचित्रय – बिहारी के दोहों में एक विशिष्टता है कि इन्होंने अपने कथनों में वक्रता का गुण भर दिया है। इन्होंने एक एक दोहे में विचित्रा ढंग से कथ्य, मानव वन को सहज ही प्रस्तुत कर दिया है। जैसे –

कहत नटत रीवत खिझत मिलत मिलत सजिवात।

भरै भौनु वें करतु है नैननु ही सौ यात।।

4.5.6 विषयों की विविधता –

बिहारी ने अपनी सतसई में किसी एक विषय को आधार नहीं बनाया है। अपितु उन्होंने सत्तसई में अनेक स्वाद भरे दिये हैं। अर्थात् इन्होंने श्रृंगार, भक्ति, नीति, कला, संगीत, रंग, समाज आदि लगभग सभी विषयों को आधार बनाया है। एक उ(रण में रंगबोध का परिचय देखिए –

अध्र ध्रत हरि के परत ओंठ दीठि पर जोत।

हरित बात की बांसुरी इन्द्रधनुषं सद होत।।

4.5.7 सनाहार शक्ति –

मुक्तककार की सफलता उसकी समाहार शक्ति पर निर्भर करती है। रामचन्द्र शुक्ल के अनुसार 'प्रबंधकाव्य' यदि वनस्थली है तो मुक्तक चुने हुए फूलों का गुलदस्ता है।' अर्थात मुक्तक की महत्ता उसकी समाहारता के कारण ही है। बिहारी ने अपने दोहों में ऐसी ही समाहार शक्ति का प्रयोग किया है। उदाहरणार्थ–

ऊजौ सरयोना ही रहयौ, श्रुति सेवत हक रंग ।

नाक सास बेसरि लह्यो बसि मुकुतनु कै संग।।

यह कर्णफूल और बेसर के माध्यम से कवि यह बताना चाहता है कि निम्न लोगों के साथ रहने पर भी महान बना जा सकता है जबकि वेदों के साथ रहने वाला अर्थात् पाठ करने वाला उन्नत हों यह स्वाभाविक नहीं है।

4.5.8 अलंकार सौन्दर्य

बिहारी जिस युग के है वहां अंलकार दिहीन काव्य की कल्पना नहीं थी। कवियों अपनी कविता को अलंकारों से सजाने का प्रयास किया है किंतु अधिकांशतः कवियों ने अलंकारों का बरबस, निरर्थक प्रयोग किया है। बिहारी ने अपने कौशल के कारण अंलकारों सहज, सार्थक और चमत्कृत प्रयोग किया है एक उ(रण देखिए–

जब जब से सुधि कीजिए तब तब सब सुधि जाहिं।

आंखिन आंखि लगी रहै, आंखै लागत माहि।।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि बिहारी के दोहों की लोकप्रियता का कारण उनका लघु आकार, अभिव्यंजना की तीव्रता एवं विचित्राता, विलक्षण कल्पनाएं, अद्‌भुत अनुभूतियों चाम्तकारिक अलंकार योजना एवं उक्ति वैचित्रय के साथ–साथ विषयों की विविधता भी है। इनकी अनुभूतियों की अभिव्यंजना इस ढंग से हुई है जो पाठक मर्म तक सहज ही पहुंच जाती है।

4.6 बिहारी के काव्य में श्रृंगार.

बिहारी का श्रृंगार वर्णन– हिंदी साहित्य के उत्तर मध्यकालीन काव्य के मुख्य प्रवृत्ति 'श्रृंगार' की है जिसके कारण आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने तो इस काल का 'श्रृंगारकाल' की सभी संज्ञा दी। वस्तुतः विश्व के साहित्य की मूल धुरी 'श्रृंगार' ही है। बिहारी के काव्य में भी अपने समसामयिक युग की सभी प्रवृत्तियां दिखाई देती है। इन्होंने सर्वाधिक रचनाएँ श्रृंगार की ही लिखी है। श्रृंगार के दो रूप माने गये है– संयोग और वियोग। बिहारी का मन युगानुरूप संयोग श्रृंगार में ही ज्यादा रमा है। इनके काव्य में वियोग श्रृंगार के रूप मिलते है किंतु वे गंभीर नहीं हैं। यहां संक्षेप में वर्णन किया जा रहा है –

4.6.1 संयोग श्रृंगार वर्णन –

संयोग 'श्रृंगार' का मुख्य भाव है। प्रेमी प्रेमिका के रूपाकर्षण, गुणाकर्षण से दोनों के बीच हास परिहास, प्रेम क्रीड़ाएं आदि संयोग श्रृंगार के अंतर्गत आते है। बिहारी के काव्य में संयोग श्रृंगार की

नायक नायिका संबंधी सभी सूक्ष्मातिसूक्ष्म क्रीड़ाओं हाव–भाव मुद्राओं आदि का सहज, स्वभाविक एवं मनोवैज्ञानिक चित्राण मिलता है। कुछ विशेषताएं निम्नलिखित हैं–

बिहारी के काव्य की सबसे बड़ी खूबी उनका सौंदर्य बोध है। श्रृंगार वर्णन में वे नायिका के रूप का उसके अंग प्रवर्तन का विवात्क, सौंदर्य चित्रा खींचते हैं–

अंग अंग छवि की लपट उपटत जाति अहारे।

खौर पासरीक तऊ लगै भरी सी देह ।।

इस दोहे में तनबंगी नायिका के गदराये शरीर की सुझेलता का बाह्य सौन्दर्य प्रस्तुत किया है। बिहारी ने सलौने सौन्दर्य का अदभुत मधुरिमा के साथ वर्णन किया है –

किसी बिठास दयौ दई इते सलौने रूप।

बिहारी मे नायक नायिका के हास परिहास का अत्यास टजीव एवं मधुर अंकन प्रस्तुत किया है–

चारच मासच साल की बुरती घरी लुकाई ।

औह भरैं भौहनु हंसै पायं दैन कहैय नटि जाई ।।

श्रृंगार रस के पारखी बिहारी ने नायक नायिका की प्रथम–क्रियाओं, चेष्टाओं, नयन–कटाक्ष आदि का स्वाभाविक चित्राण किया है। ऐसा जान पड़ता है बिहारी तरुण प्रेमासक्त पुरूष एवं युवती के मन को पढ़ बैठे हों तथा वे अपने दोहों में उनकी एक एक कसक, को, उमंग को चंचलता को उतार गये हैं। उदाहरणार्ण सम्पूर्ण समाज के समक्ष नायक नायिका की संकेतिक प्रणय क्रिया देखिए–

कहत नटत रीझत खिजत मिलत खिलत लजियात।

भरे भौनु में करत है नैननु की सौ बात।।

श्रृंगार के संयोगपक्ष में 'बहिर्वति' प्रधान होती है। लाजअंग का रूप और उसकी चेष्टाएं आती है, हाथों का और चक्षुओं का उद्दीपन आता है अर्थात श्रृंगार में नखशिख और अवैध और षड्ट्टतु की उक्तियां आती हैं इनमें से बिहारी ने लडकियां का तो अधिक और ट्टतुओं का ग्रहण नाम मात्रा का ही किया है। प्रेम प्रिय के संपर्क में प्रत्येक वस्तु को प्रियमय कर देता है। प्रिय का हंसता खेलता रूप तो भाता ही है, प्रिय के साथ खेलना भी भाता है। बिहारी ने साध्क नायक नायिका के प्रेम संबंधी जो वर्णन दिए हैं ये परंपरित परिमति को लांघ गए हैं। जैसे एक उ(रण देखिंए जिसमें नायक के कंबूतर रमणीयता ला रहे हैं –

ऊंचे चिते सराहियत गिरह कबूतर लेख।

प्रलंकित दुब पुलकित बदन तन पुलकित किहिं हेत।।

पंक्ति में जिस प्रकार उपास्य और उपासक की एकता होती है उसी प्रकार प्रेम के क्षेत्रा में प्रिय और प्रेमी की। कोई नायिका, नायक के ध्यान में इतनी मग्न है कि वह अपने को ही नायक समझकर स्वयम् अपने पर ही रीझ रही है –

पिय के ध्यान गही गही रही वही ह्वै नारि।

आपु आपुहीं आरसी लखि रीझति रिखवारि।।

किसी नायिका के पैर में कांटा गड़ गया है। उसे काटे गढ़ने की चिंता नहीं है, वह इसी में मग्न है कि स्वयं प्रिय पैर से कांटा निकाल रहा है–

इहिं कांटे वो पायं गडि लीन्ही भरत छिपाय।

प्रीति जनायत मीति सो मीत जु काड्यौ आय।।

प्रिय का स्पर्श इतना सुख है कि कांटे ने जीती को मारा नहीं, कष्ट नहीं दिया, उल्टे जो कष्ट पहले से था वह दूर हो गया।

मुखाओं का चिढ़ाने, उन्हें चुभती बात कहने या चौंकाने, उनकी क्रीड़ाओं को देखने, उनकी चेष्टाओं का आनंद लूटने के लिए जानबूझकर अनजान की तरह बन जाना होता है।

नाक चडै सीधे करै जिसे छबीली छैल।

फिरि फिरि भूलि वहै गहै प्यौ कंकरीली मैल।।

नायक और नायिका नंगे गांव कहीं जा रहे है मार्ग एक ओर कंकरिला है, दूसरी ओर साफ। पैरों में कंकड गढ़ने से नायिका 'सीबी' करने लगती है। यह 'सीबी' नायक को अच्छी लगती है, इसलिए नायक जानबुझकर चलते कंकीरले रास्ते से चलने लगता है, लेकिन वह नाट्य यही करता है कि मैं भूल से इध्र आ गया।

प्रेम में ऐसे न जाने कितने खिलवाड़ हो सकते हैं। श्री कृष्ण वृंदावन में किसने की खिलवाड़ किया करते थे। क्रीड़ाओं में 'घोर निहीचनी' या 'आंख मिचौली' 'जलविहार', 'बहाने का शयन', 'झूले की क्रीड़ा', 'फाग के खेल' आदि अनेक का समावेश है। इन सबका वर्णन उन्होंने भी किया है, परम्परा प्रेमियों के लिए प्रायः बहुत कुछ जुटा दिया है। फिर भी प्रेमवृत्ति की परख इनमें लकीर पीटने वालों से आ—

होऊ घोर निहीचनी खेल ने खेलि अधाय।

दुरत हिये लपटाय कै सुवत हिये लपटाया।।

प्रीतम दूंग नीचंत सिया पानि परम सुख पाया।

जानि पिछानि अजान लौ नैक न हीति लखाय ।।

विनोद से जब किसी की आंख पीछे से आकर मूंद लेते है जब जिस व्यक्ति की आंख मूंदी जाती है वह आंख मूंदने वाले की पहचान बतलाता है। यहां नायक ने नायिका की आंखे मूंदी है। नायिका पहचानकर भी नहीं पहचान रही है, करस्पर्श का सुख उसकी इस बहानेबाजी का कारण है।

मुंछ उभारि प्यौ लखि रह्यौ रह्यौ न मौ पित सैन।

फरके ओठ उठे पुलक गए उभरे जुरि नैन।।

नायिका सोने का बहाना करके लेट रही है प्रिय मुंह खोलकर उसका बहाना निरख रहा है। अंत में दोनों से रहा नहीं गया और नेत्रा जुड़ गए। नायिका के मस्तक पर नायक ने टीका लगाया है पर कंप से वह टेढ़ा मेढ़ा हो गया है। टेढ़े तिलक ने नायिका में कितना बांकपन ला दिया है —

कियो जु चिदुक उठाय कै कंपित कर भरतार।

टेढीये टेढी फिरत टेढ़े तिलक तिलार ।।

श्रृंगार वर्णन में बिहारी ने नायिका के रूप सौन्दर्य का खुलकर वर्णन किया है। रूपवर्णन में भी इन्होंने अधिक रचना नेत्राों पर की। अंतर्गत भावों को व्यक्त करने वाला मुख है और उसमें मुख्यता

नेत्राों की है। इन्होंने नेत्राों के अनेक व्यापार दिखाए हैं– उनका संचार, बोधकता, चंचलता, विशालता आदि। वहीं सीधा वर्णन है और कहीं रूपक, उत्प्रेक्षा, उपमा, श्लेष आये की लपेट है –

पहुंपति डंटि रन सुगट लौ रोकि सकै सब नाहि।

तरणनहू की भीर में आखिर उहीं चलि जाहि।।

बिहारी अपनी अनुभाव योजना में दक्ष हैं अतः नायक नायिका संबंधी चुम्बन, आलिंगन, दंत आदि प्रणय क्रियाओं को विधात्मक अभिव्यक्ति दी है। यही नहीं उन्होंने पंतगबाजी, कबूतरबाजी, काम आदि को भी इनके प्रभाव व्यापारों का माध्यम बनाया है। उदाहरणार्थ गायक की चंलग को छूने का नायिका का बावलापन देखिए–

उहति जुहौ लखि जतन की अंबना अंजना मांह।

बेरि लौ होरि फिरत छुअत उबीली छांह।।

संयोग श्रृंगार की परिणति रतिक्रीड़ा में बसाई गई है। अतः बिहारी ने अपने काव्य में नायक नायिका के माध्यम से रति पिण्डों को उभारकर उनके प्रेम व्यापार को पुष्ट भी किया है, लेकिन यह वर्णन स्थूल नहीं सांकेतिक है–

पलक पीठ अंजनु अधर ध्रे महावरू भाल।

आज बिल दूभली करे भले बने हो लाल।।

संयोग श्रृंगार में बिहारी ने अपनी सौन्दर्यपरक दृष्टि के आधार पर नायिका का नख शिख वर्णन भी किया है। जो चमत्कारपूर्ण एवं आकर्षक है कुछ झलकियां प्रस्तुत है–

केश कछक सुधिवकण स्थान रूचि सुचि सुकमारा।

मनतु न पणु पणु अपणु लखि बिखुरे सुबरे षाह।।

बेदी– छिव निसार बेडी दिए अगनित बढ़त उदोस।

नेत्रा– और ओप कनीनिकनु गमी ध्नी तिरताऊ।

मुख – हिप्यो छबीली मुख लसै नीले अंदर चीर।

सनौ कलानिधि झलबतै कालिन्दी के तीर।।

चरण – खफन बरन तरुनी चरन अंगुरी अति सुकुमार।

चुषण सुरंग रंग की नेना अपि विछियतु के भार।

वस्तुतः बिहारी द्वारा वर्णित नायक नायिका के व्यापार एवं श्रृंगार का जो वर्णन किया है उसमें मिलन, मस्ती, अधीरता, विवशता, उत्सुकता संबंध, भावना, मोह, आवेग, व्यंग्य, स्पर्श–सुख, अभिसार काकुकता आदि सभी कुछ विद्यमान है। बच्चन सिंह के अनुसार ''बिहारी के संयोग वर्णन में यौवन, प्रेम और सौन्दर्य की त्रिावेणी का रध्कि उस स्थिति को पहुंच जाता है जिसे आचार्य शुक्ल हृदय की 'मुक्तावस्था' कहते हैं।''

4.6.2 वियोग श्रृंगार वर्णन

काव्य शास्त्रा में श्रृंगार रस दूसरा भेद 'विप्रलभ श्रृंगार' अथवा 'वियोग श्रृंगार' है। संयोग श्रृंगार में नायक और नायिका का मिलन होता है जबकि 'विप्रलभ श्रृंगार' में दोनों का विरह या वियोग परन्तु

काव्य में दोनों की विभोगवस्था में भी हैनों ही का स्थायी भाव के परस्पर आलम्बन और आश्रय रहते है। 'उद्दीपन विभाव' के अंतर्गत आलम्बन की चेष्टाओं, गुणों तथा तत्सम्बधी वस्तुओं का स्मरण किया जाता है तथा प्रकृति का वर्णन भी जैसे संभोगवस्था में रति को उद्दीपन करके नायक और नायिका के लिए उतेजक वातावरण तैयार करता है उसी प्रकार काव्य में प्रकृति वर्णन के लिए द्वारा प्रियजनों की विरहारिन और अधिक बढ़ जाती है। सामान्य रूप से षड्ऋतु या बारहमासा वर्णन को हिन्दी के कवियों ने अपनाया है। बिहारी ने पारगाथा को तो नहीं हां षड्ऋतु का वर्णन किया है।

बिहारी ने संयोग श्रृंगार संबन्धी जितने दोहे लिखे हैं उसकी अपेक्षा वियोग श्रृंगार संबंधी दोहे अल्पमात्रा है। कारण कवि की रूचि और युग की जांग है। फिर भी बिहारी मे वियोग का जहां भी वर्णन किया है उसको देख लें। काव्याचार्यो में वियोग श्रृंगार के चार भेद बताएं है–

1. पूर्वराग
2. मान
3. प्रवास
4. करूण

मिलन से पहले नायक या नायिका में एक दूसरे के प्रति उठने वाली जिज्ञासा, उत्कंठा, अभिलाषा, वेदना, तड़प, या टीस 'पूर्वराग' कहलाती है। संयोग हो जाने पर नायिका या नायक का एक दूसरे के प्रति रूठ जाने का भाव 'मान' कहलाता है। अधिकांशतः नायिका की ओर से ही मान की क्रिया होती है क्योंकि नायक परस्त्री गमन करके आता है। अतः मान दो प्रकार का होता है। प्रणयमान एवं ईर्ष्यामान।

पति अर्थात नायक जब किसी कार्यवश प्रदेश चला जाता है और नायिका उसके वियोग में दुखी रहती है तो इस अवस्था को 'प्रवास' कहते हैं। 'करण' की स्थिति में नायक की मृत्यु हो जाती है किंतु पुनर्जन्म आदि के कारण मिलन की आशा बनी रहती है। बिहारी के विप्रलंभ श्रृंगार वर्णन में पूर्वराग की अपेक्षा प्रवास का वर्णन ही अधिक मिलता है। मान संबंधी दोहों की रचना भी की है। उदाहरण स्वरूप कुछ बिंब देखिए–

पूर्वराग–पिय के ध्यान गहीं गही रही वही हवै नारि।

आपु आपु ही आरसी, लखि रीझाति रिझवारि।

मान – रही पुकार पाटी सु रिस, भरे भौंह चित नैन।

लखि सपनो पिय आन रत जगहु, हु लगेत हिये न।।

प्रवास–हयां से हवां हवां से हयां नैकों धरति न धीर।

निसि दिन वाटी सी फिरति बाढी गाढी पीर।।

करुण–जो वाके तन की दस देख्यौ चाहत आपु।

तौ बलि नैकु विलौकियै चलि अचकां चुपचाप।।

वियोग में वेदना की पूर्ण विवृति के लिए इन दस दशाओं का वर्णन होता है– अभिलाषा, चिंता, स्मरण, गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, उन्माद, जड़, व्यधि, करण। इनवें भी अधिक वर्णन कवि व्याधि का ही करते हैं। बिहारी ने भी व्याधि का ही विस्तार अधिक रखा है। कुछ उदाहरण देखिए–

अभिलाषा–प्रेम का मार्ग तलवार की भांति तीखा है, पर मन की विवशता का क्या किया जाए, जो नामक की अभिलाषा में दिन रात व्याकुल रहता है। सखियों ने भी समझाया, पर प्रभाव नही पड़ा क्योंकि स्थिति अब हाथ से निकल चुकी है–

कीनहूं, कोटिक जतन, अब कहि काटै कौनु।

मो मनु मोहन रूप मिली, भै पानी मै का लोनु।।

चिंता– नायिका नामक को नम के चुकी है परन्तु कुल और गुरुजनों की मर्यादा और लोकलाज के कारण मिलन चिंता का विषय बन गया है। टेक और प्रबल अनुराग है, मिलन की तीव्र लालसा है, दूसरी ओर समाज के कठोर बंधन है। वह दोराहे पर खड़ी व्याकुल है चितिंत हैं–

नई लमनि, कुल की सकुच, विकल भई अकुजाइ।

दुहुं ओर ऐची फिरति, फिरकी लौं दिनु जाइ।।

स्मरण– वियोग में नायिका को नायक की स्मृति वे सभी स्थान दिलाते है। जहां वे सुखद पलों में मिलते थे। नायिका सर्वत्रा उन स्थलों पर नायक को खड़ा देखती है–

जहां जहां ठाह्यौ लख्यौ, स्थानु सुभग सिर मोरू।

बिन हूं उन छिनु नहि रहतु, दुमनु अजौ वह ठौर।।

गुणकथन– विरह की अवस्था में नायिका पल पल नायक को नायक के गुणों का स्मरण करती है क्योंकि नायक के गुण ही नायिका की पीड़ा शमन कर सकते हैं। अतः नायिका कह उठती है–

लाल तुम्हारे विरह की अगनि अनूप अपार।

सरसे बरसै नीरहूं, अजहू मिटै न चार।।

उद्वेग– पूर्वानुरागिणी नायिका के मन में नायक के प्रति प्रेम का अंकुर क्या प्रस्फुटित हुआ, उसके अब पलभर भी चैन नहीं आता है उसकी गानसिक शान्ति भंग हो गई है। वह घर में टिककर नहीं बैठ सकती है। वह प्रेम की अग्नि में यहां से वहां भागी फिर रही है। ऐसी दुखियारी का बिहारी वर्णन करते हुए कहते हैं–

हयां से हवां हवां तै इहां नैको ध्रत न धीर।

निसिं दिन हाठी सी फिरति नाठी नाठी पीर।।

प्रताप– नायिका की प्रलापावस्था का वर्णन करते हुए कवि कहते हैं–

कहे जु वचन वियोगिनी विरह विकल बिलखा।

किए न किहिं अंगुदा सहित सुवाति बोल सुबाइ।।

उन्माद – विरहावस्था में नायिका की अवस्था उन्मादी हो जाती है। अतः वह कब, कहां, क्या कर रही है उसे ज्ञात नहीं होता। एक दृश्य देखिए–

विरह जरी लखि जोगवनु कहयों न डहि कै बार।

अरी आहु भजि भीतरी बरबत आजु अंगार।।

जड़ता – प्रेम की अग्नि से दग्ध नायिका स्तंभित हो जाती है। उसकी सारी चंचलता, उसका सारा आह्लाद समाप्त हो जाता है। जड तुल्य वह नायक की आस में लीन रहती है। मन की ऐसी रोगिणी का कवि बिहारी वर्णन करते हुए कह रहे हैं–

बरी डरी सी टरी विध कहां खरी चिल चाहि।

रही कराहि कराहि अति अब मुख अहि न आहि ।।

व्याधि–व्याधि का अर्थ है रोग। प्रेम का रोग लो संसार ने विचित्रा है। इसका उपचार वैद्य के पास नहीं है। इसका इलाज केवल प्रियसन के पास ही होता है। नायिका की दशा देखकर उनकी सखियां चिंतित है और वे जानती है कि इसका इलाज प्रिय की मीठी बातें ही हैं। उन्हीं से इसे शांति मिलेगी–

या के मन और कछू, लगि विरह की लाइ।

पजरै नीर गुलाब के, पिय की बात बुझाइ।

मरण– साधारणतया मरण का वर्णन काव्य में नहीं पाया जाता। बिहारी सतसई में एक दो प्रंसग आए हैं। एक प्रस्तुत है –

कहा कहाँ बाकी दशा हरि पानन के ईस।

विरह जवाला जरियो सखे गरियौ भयो अतीस।।

बिहारी ने नायिका की विरहावस्था व्यक्त करते समय उनके प्रवास के आधार पर वर्णित चारों रूपों का वर्णन किया है।

1 **प्रवत्स्वतपतिका –** अर्थात जिसका पति परेवस जाने वाला हो। उदाहरणार्थ–

अजौं न जाए सहजं रंग विरह दूबरे गात।

अबहीं कहा चलाहति ललन चलन की बात।।

कितनी मधुर और सहज उक्ति है। नायिका पुनः परदेस जाने की तैयारी करने वाले नायक से कह रही है कि अभी अभी तो तुम लौटे हो अभी तो मेरे विरह से उग्ध अंगों में रोनक नहीं आई है। अभी तक मेरा रंग सहज नहीं हुआ है, स्वाभाविकता आई नहीं हैं, और तुम जाने की बात कर रहे हो। उस उक्ति में कितनी सादगी है। अलंकारविहीन इस कथन से नायिका के मन की सारी भावनाओं, आकांक्षाओं, आशंकाओं, और लालसाओं को एक साथ व्यंजित कर दिया है।

2. **आगतपतिका –** अर्थात् जिसका पति परदेस से लौट आया हो। बिहारी ने इस नायिका का बड़ा ही स्वाभाविक चित्राण किया है। लोक में स्त्राी की बाई आंख का फड़कना शुभ सूचक माना जाता है। आज विरहिणी नायिका की बाई आंख फड़क उठी तो उसने समझ लिया कि नायक विदेश से लौट रहा है। बस यह कल्पना करते ही वह नायक के स्वागत के लिए वेष भी सजाने लगी–

मृगनैनी दूह की फरी उर उछाह तन फूल।

बिन ही पिय आगम उबमि पलटन लगी दुकूल।।

अतः नायिका की मनोदशा का बढ़ा ही मनोवैज्ञानिक चित्राण किया है।

3 **प्रोषितपतिका –** जिसका पति परदेस में हो। विरह में दग्ध नायिका की ऐसी दशा हो गई है कि मृत्यु को भी चश्मा लगाकर ढूंढना पड़ रहा है।

करी विरह ऐसी तऊ गैल न छांडतु नीच।

दीनैहू, चसमा चखनि चाहै लहै न मीथ ।।

बिहारी के काव्य में विरह की सभी दसों दशाओं के भी दर्शन होते हैं। लेकिन बिहारी का वियोग वर्णन उतना मार्मिक और स्वाभाविक नहीं है जितना संयोग वर्णन। बिहारी का विरह वर्णन उहात्मक हो गया है। बिहारी की चमत्कार प्रियता, अलंकार ने विरह को सहज नहीं रहने दिया है उदाहरणार्थ–

आहे दे आले बसन जाडे हू की रात।

साइस ककै सनेह बस सखी सभी ढिग जात।।

अर्थात् विरहिणी के शरीर में विरह की इतनी भीषण ज्वाला जल रही है कि उसकी सखिया सर्दियों की रात में भी गीले वस्त्राों की ओट दे देकर बड़े साहस से उसके पास जाती है ताकि वे उसकी विरहाग्नि से झुलस न जाए। ऐसे अनेक उ(रण बिहारी सतसई में है जैसे नायिका विरह में इतनी कृशकाय दिखाई है कि मृत्यु भी चश्मा लगाकर उसे नहीं देख पाती है या फिर ऐसा वर्णन है जिसने नायक का निशानी रूपी छल्ला विरहिणी नायिका की कमर में आने लगा। यहीं नहीं नायिका को इतना कृशकाय दिखाया है कि सांस लेते ही छह सात कदम आगे चली जाती है और सांस छोड़ने ही छह–सात कदम पीछे चली जाती है। इस प्रकार वह चलता फिरता हिंडोल या घड़ी का पैंडुलम बन गई है।

सारांश यह है कि बिहारी का मूल विषय श्रृंगार रहा है जिसका उन्होंने विशिष्ट ढंग से वर्णन किया है जिसमें स्वाभाविकता, मौलिकता, मार्मिकता, मनोवैज्ञानिकता, सूक्ष्मता, आदि गुण विद्यमान हैं लेकिन वियोग श्रृंगार में उनकी अभिव्यक्ति हल्की जान पड़ती है। जोकि उनकी रुचि और उनके युग की प्रवृत्ति का परिणाम है।

4.7 बिहारी सतसई वर्ण्य विषय का चित्राण

रीतिकालीन सभी कवियों के बारे में प्रायः यह धारणा बनी रही है कि के श्रृगार को धूरी बनाकर उसके आसपास घूमते रहे हैं। लेकिन ऐसा नहीं है। केशव देव, पदमाकर, भूषण जैसे अनेक कवि है जिन्होंने श्रृंगार से इतर यु(, प्रकृति, कला, समाज, संस्कृति, भक्ति, नीति आदि विभिन्न विषयों से भी अपने काव्य को सुशोभित किया है। बिहारी भी इन्हीं कवियों में से एक कवि है जिन्होंने श्रृंगार के अतिरिक्त अन्य भावाभिव्यक्तियां भी की हैं जिसका मूल कारण इनका समाज और प्रकृति से अटूट संबंध है।

बिहारी ने जो व्यंग्योक्तियां या कटुक्तियां दी हैं वे मात्रा वाणी का कोरा विलास नहीं है वस्तुतः एक विशेष भावात्मक स्थिति में जब इनकी वाणी वक्र हो उठी है सद इनका जन्म हुआ है उदहारण स्वरूप वैद्यों के शोषण और व्यर्थ दवा पर व्यंग्य कसते हुए ये कहते हैं–

बहु धन लै अहसान कै पारो, देस सराहि।

बैदबधू हंसि भैद सों रही माह मुंह चाहि।।

यहां वैध पर हंसी की है जो एक मरीज को नपुंसकता दूर करने की दवा दे रहा है जबकि वह स्वयं नपुंसक है। उसकी इस क्रिया को देख वैद्य की बहु कुटिल हंसी से यह रहस्योद्घाटन करती हैं। इसी प्रकार एक ज्योतिषी की पसन्नता का उदाहरण देखिए–

चित्त पित्त मारक जोग गनि भयौ भयें सुत योग।

फिरि हुलस्यों जिस जोयसी समुझे जारज जोग।।

यहां ज्योतिषी पर व्यंग्य कसा है जो यह जानकर दुखी होता है कि मेरा पुत्रा मेरी हत्या करेगा लेकिन यह जानकर कि मेरे तो जारज पुत्रा होगा पलभर में ही बिना सोचे प्रसन्न होने लगता है।

बिहारी ने प्रकृति का आलम्बन, उद्दीपन एवं मानवीकरण सभी रूपों में वर्णन किया है उदाहरणार्थ वसंत श्री का वर्णन देखिए–

छकि रसाल सौरभ सने मधुर माधवी गंध ।

ठौर ठौर झूबत झंपत भौर झौर बघु अंघ।।

संपूर्ण वातावरण बसंती गंध से सुगंधित हो उठा है एक और उ(रण देखिए जहां ग्रीष्म की भीषणता का प्रकोप दिखाया गया है–

बैठि रही अति सघन वन पेठि सवन तन बांह।

निरखि दुपहरी जेठ की छांही चाहति छांह।।

भक्तियुग के बाद रीतियुग आने पर भी भक्ति का भाव क्षीण नहीं हुआ श्रृंगारिक वातावरण में भी लगभग सभी कवियों ने भक्ति का काव्य लिया है। बिहारी के युग में भक्तियुग की भांति ब्रह्म के रूप, विभिन्न मतों को लेकर इतना झगड़ा या कोलाहल नहीं था। बिहारी की मतवाद को निरर्थक कोलाहल बताते हुए कहते हैं–

अपने अपने मत लगे बाटि मचावत सोर।

ज्यौं त्यौं सब ही सेइवो एकै नंदकिशोर।।

हे ईश्वर के निर्गुण और सगुण रूप से परे बात कहते हैं

दूरी भजत प्रभु पीठि है गुन विस्तारन काल।

प्रगटत निर्गुन निकट ही चंग रंग गोपाल।।

वे जानते हैं कि ईश्वर निगुण, निराकार, निरंजन है लेकिन वे फिर उसे सगुण, गुणों में बांधने का प्रयास करते हैं–

मोहूं दीजै नोथ जो अनेक पतितनि दियो।

जौ बांधे ही तोभ तो बांधे अपने गुनि।।

निर्गुण सगुण की भांति वे राम और कृष्ण में भी भेद नहीं मानते हैं वे कहते हैं–

कौन भांति रहि है बिरद अब देखणी मुरारि।

बीधे मोसो आनिकै गीधे गीधहि तारि।।

तुलसी ने जिस प्रकार वक्रतापूर्ण ढंग से ईश्वर को 'पतितपावन' को स्वयं को 'पतियों का टीका' कहकर अपने भाव प्रस्तुत उसी प्रकार ये भी ईश्वर से वक्रतापूर्ण ढंग से जुड़ते हैं–

करौ कुबल जग कुटिलता तजौं न दीनदयाल।

दुखी होहुगे सरल हिय बसत त्रिांभगी लाल।।

संतों ने जिस प्रकार भक्ति के मार्ग में बाह्याचारों का कर्मकांडों का विरोध किया उसी प्रकार बिहारी भी भक्ति में दिखावे की अपेक्षा सावगी और सच्चेपन की बात करते हैं।

जपमाला छाया तिलक सरै न एकौ काम ।

मन कांचै नांचै वथा सांधे राधे राम ।।

बिहारी ने अपनी सतसई के आरंभ में अर्थात मंगलाचरण में नागरी राधा की उपासना की है जो इनकी सतसई का आधार है वे कृष्ण की अपेक्षा उनकी उपासना को प्रधानता देते हैं–

बेरी भव बाधा हरौ राध नागरि सोइ।

जा तन की झांई परै स्याम हरित दुति होइ।।

किंतु वास्तव में बिहारी कृष्णोपासक हैं। राधा जहां उनके श्रृंगार काव्य के आलम्बन है वहीं कृष्ण ही उनके सब कुछ हैं–

सीस मुकुट कटि काछनी कर मुरली उनाल।

इहि मानक नो मन बसो सदा बिहारीलाल।।

बिहारी अपने इष्ट मे विनय अनुनय करते हैं जिससे उसके पाप दोष क्षम्य हो जाए और सहज ही मोक्ष मिल सकें।

कीजे चित सोइ तरे जिहिं पतितन के साथ।

मेरे गुन ओगुन गनन गनौ न गोपीनाथ ।।

किंतु एक ओर बिहारी जहां अपने इष्ट से विनय करता हैं वहीं कभी कभी भगवान की अपने प्रति उपेक्षा देखते हुए उन्हें उपालंभ भी देते हैं–

कब को टेरतु वीन रट होत न स्यान सहाइ।।

तुमहुं लागी जगतगुरु जगनायक जग बाइ।।

इस प्रकार बिहारी ने बड़ी ही चतुरता के साथ एक ओर अपने युग की स्थिति का संकेत कर दिया है और दूसरी ओर अपराधी भक्त की भी पीर हरने का अनुरोध भगवान से बड़े ही तर्क संगत ढंग से किया है।

संक्षेप में कहें तो बिहारी का काव्य केवल श्रृंगार पर ही आधारित नहीं है। यह वह सागर है जिसमें विभिन्न विषयों की नदियां समाहित हो गई है।

बिहारी का समाज– प्रत्येक साहित्यकार अपने साहित्य में अपने युग का प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से उभारता है। बिहारी रीतिकाल के सजग सचेत कलाकार थे जिन्होंने आश्रयदाता के दरबार के बंधन में रहते हुए भी अपने को एवं अपनी कविता को समाज से कटने नहीं दिया। बिहारी ने अपनी सतसई में अपने युग की झलक दिखलाने का प्रत्यन किया है। उनकी सतसई को पढ़ लेने मात्रा से तत्कालीन. राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं साहित्यिक परिस्थितियों का सहज ही ज्ञान हो जाता है।

बिहारी को जिन लोगों के बीच जैसा जीवन जीने का मौका मिला उसी को देखा, जिया और महसूस किया। उनकी पैनी दृष्टि के सामने सामाजिक जीवन का जो रूप आया है उसे बिहारी ने अपने दोहों में सचित्रा उतार दिया। सर्वप्रथम इनकी रचनाओं में तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था का रूप देखें।

राजनीतिक व्यवस्था– बिहारी का युग मध्यकाल था। जब मुगलों का आधिपत्य था तो दूसरी ओर बचे खुचे हिन्दू राज, सांगत, सुबेदार आपस में लड़ भिड़ रहे थे। एक ओर प्रजा पर राजा महाराजाओं का शासन चलता था और दूसरी और मुस्लमतान सुबेदारों का शासन। वस्तुतः दो भुजी था जिससे प्रजा त्रास्त थी। बिहारी ने जिसका वर्णन इस उपमान द्वारा किया है–

दुसह दुगज प्रजान मे क्यों ने बढ़े दुख द्वन्द।

अधिक अंधरों जग करे मिति पायस रविचन्द।।

इस युग में शक्तिशाली शासक वर्ग का आंतक था। सभी ऐसे शासकों से अपनी रक्षा के लिए उन्हें प्रसन्न रखते थे लेकिन जो चाटुकार नहीं थे वे अपनी शांत प्रकृति के कारण अनदेखा किए जाते थे। उदाहारणार्थ –

बसै बुराई जासु तन साही कौ सनमानु।

भलौ भलौ कहि छोड़िये छोटे रूह जपु दानु।

ऐसे वातावरण में शासकों को गुण और योग्यता वाले उचित लोगों को पहचानने को मौका नहीं मिल पाता था। इसी कारण बिहारी को भी आरंभ में अपेक्षा सहनी पड़ी थी। अतः ऐसे अधिकारी वर्ग को देख उन्हें दुख भी होता था। अतः वे कहते है –

मरतु प्यास पिंजरा परयौ सुआ सने के फेर।

आदरुक दै है बोलिअतु बालसु बलि की बेर।।

यही नहीं राजा भी अपने ही पक्ष के लोगों का उन्नति के अवसर दिया करते थे। इस बात की ओर संकेत करते हुए बिहारी कहते हैं।

अपने अंग के जानि के जोवन नृपति प्राचीना

स्तन मन नैन नितंब को बडौ इजाफा कीन।।

तदयुग उच्च पदाधिकारी सत्ता के मद में चूर थे। अतः न्याय व्यवस्था भी चरमराई हुई थी। अधिकारीगण उचित अनुचित का ध्यान दिए बिना घातक अपराध के दोषियों को भी खुला छोड़ देते थे और निरपाधियों का धर दबोचते थे।

छुटन न पैवतु छिनकु बसि नेह नगर यह चाल।

मारयौ फिर फिरि मारियै खूनी फिरै खुस्याल।।

अतः यह कहें कि गुणीजनों का अनादर तथा गुणहीन मूर्खों का अधिक सम्मान सांमती व्यवस्था की प्रमुत्य विशेषता थी। इसका मूल कारण था राजाओं की विलासिता बिहारी भी सजग साहित्यकार की भांति इसी विलासिता से अपने राजा जयसिंह को चेताने का प्रयास करते हैं–

नहि परागु नहिं मधुर नहिं विकासु इहि काल।

अली! कली ही सो बंध्यो आगे कौन हवाल।।

इस विलासिता के कारण ही सभी राजा अपने समाज को अनदेखा कर रहे थे, अपनी शक्ति का स्वयं नाश कर रहे थे। दूसरी बात यह है कि मुगलों के बहकावे में जाकर हिन्दू राजा आपस में ही अपने भाइयों का वध करने पर उतारू थे, बिहारी ने इस बात का संकेत दिया है। वे भी अपने राजा जयसिंह को समझाते हैं–

स्वारथ सुकृत श्रण कृपा देखि विहंग विचारि।

बाज पराये पानि परि तू चच्छिनु न नारि।।

अतः तत्कालीन राजनीतिक व्यवस्था को विलासिता की दीमक चाट रही थी।

सामाजिक अवस्था—बिहारी का समाज विलासिता का समाज था। उच्च वर्ग अपनी मौज मस्ती से सराबोर था। कामिनी ही जीवन का लक्ष्य थी। बहू विवाह की प्रथा को जिसके कारण बढ़ावा मिला। विवाहिता और अविवाहिता दोनों के साथ व्यभिचार होता था। संक्षेप मे कहे तो समाज 'राम' की उपासना छोड़ 'काम' की उपासना कर रहा था। राजदरबार से परियार तक फैले व्यभिचार को बिहारी ने शब्दब(किया है। उदाहरणार्थ –

कहति ने देवर की कुबत कुलतिय कलह हराति।

परजजत बंजार टिग सुक लौ सुकति जाति।।

किसी भी को छेड़ना, चूमना, हाथ पकड़ना देहस्पर्श करना तद्युग में आम बात थी। उदाहरणार्थ–

लरिका लैवे के विसनु लंगरू को ढिग आइ।

गयो अचानक आंगुरी छाती छैल छुवाइ।।

पान खाना, मंदिरा केवल पुरुषों का ही नहीं स्त्रिायों का भी शौक हुआ करता था। लज्जा, कुल मर्यादा का स्त्रिायों ने त्याग कर दिया था। पुरुषों के लिए स्त्राी का वासनामयी, कामनामयी रूप ही प्रधान था उसे नारी के अन्य रूपों से कोई लेना देना नहीं था। बिहारी ने एक बिंब अंकित किया है जिससे नायिका ऐसी कामिनी ही प्रिय के मेद में ऐसें चूर है कि अपने पुत्रा के अंधरों के चुंबन से हो प्रिय का अधर पात्रा का आनन्द ले लेती है।

विंहसि बुलाइ विलोकि उत छोड़ तिया रस घूमि।

पुलकि पसीजति पूत कौ पिय चूम्यो मुहुं चाूमि।

इस युग में ऐसे कर्म से वात्सल्य की मूर्ति मां स्वरूप ही चूर चूर हो गया।

तद्युग में ग्रामीण स्त्रिायों की गठीली देह और पुष्प के आभूषण उनके सौंदर्य के व(क थे तथा नागर स्त्रिायां विभिन्न हीरे जवाहरात, नभ, मुक्ताबलि, बिछुआ, महावर, काजल, अंगरग, केसर, जरी की साड़ियां, ओढ़नी, लहेंगे आदि पहनती थी।

सतसई में बिहारी ने तत्कालीन युग की सामाजिक स्थिति का चहुमुखी चित्राण हुआ है। प्रथाओं, त्योहारों और पर्वो ;जैसे दशहरा, तीज, होली, गणेश पुजन, श्रा(द्ध आदि का वर्णन किया है। पाणि ग्रहण संस्कार और बड़ी बूढी स्त्रिायों द्वारा नववधू का शिक्षण, उपहार और नववधू के बर्तन छूने आदि के पारस्परिक संकेत भी बिहारी ने दिए हैं। उदहारणार्थ –

स्वेद सलितु रोमांच कुक्षु महि दुलही अरु नाथ।

दियौ हियौ संग हाथ के हथलेपे ही हाथ।।

इसके अतिरिक्त बिहारी ने उस युग में खेलकूद तथा मनोरंजन के अन्य रूचिकर कार्यों का भी वर्णन किया है जैसे नटों के खेल, तमाशे, चौगान, खेलना, आंख मिचौली, पतंग उड़ाना, कबूतर उड़ाना आदि।

धर्म का स्वरूप–तद्युगीन समाज में भक्ति भावना का विकास गानो रुक सा गया था। श्रृंगारी वातावरण के कारण वैभव विलास में फंसे नर नारी राम को छोड़ कामदेव की पूजा कर रहे थे। वे इसी के माध्यम से इसी में डूब कर मुक्ति का मार्ग खोज रहे थे।

तंत्रीनाद कवित रस सरस राग रति रंग।

अनबूढे बूढ़ै तरै जे बूढ़ै सब अंग।।

भक्तिकाल में राधाकृष्ण जो आराध्य थे वे रोतिकाल में आकर मात्रा नायक नायिका रह गए। काम के आसम्बन मात्रा गए। इस सत्य को सो भिखारी दास स्वीकारते थे अतः खुलकर कहा है–

आगे रे रीति है कविताई ।

न तु राधिका कन्हाइ सुमिरन को बहानो है।

भक्तिकाल की भांति इस युग में भी हृदय की अपेक्षा बाह्यचारों ;जप, माला, तिलक आदिद्ध कर्मकारों की ओर समाज झुका हुआ था। भक्तिकाल में बने विभिन्न संप्रदाय अपने अपने मतानुसार आगे बढ़ रहे थे। संक्षेप में कहें तो समाज में धार्मिक समन्वय और ऐक्य का अभाव था।

साहित्यिक दशा – राजनीतिक दृष्टि से भ्रष्ट, सावधिक दृष्टि से पतित और धर्म की दृष्टि से अराजकता यु(में साहित्य की क्या दशा होगी इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। उत्तर मध्ययुग में कवि आश्रयदाताओं के इशारे पर उनकी तुष्टि हेतु रचना किया करते थे। अतः राज प्रशास्ति और श्रृंगार का काव्य ही प्रचुर मात्राा में लिखा गया है। इस युग में कविता 'स्वांत सुखाय' न होक 'स्वर्णिम सुखाय' हो गई थी।

तुलसी ने अपने युग में जितना, आदर्श लाने का प्रयास किया उतना ही उस युग के कवियों ने पतन की ओर ले जाने का कार्य किया। धन के लोभी साहित्यकारों ने अपने पेट के आगे समाज के भविष्य को दांव पर लगा दिया। वे भूल गए कि वे समाज को क्या दे रहे हैं।

कवियों ने पर्दे की सभी क्रियाओं का काव्य फलक पर उतार दिया। काव्य के पन्ने नग्न चित्राों और सुरत के दृश्यों से भरे हुए थे। कवियों ने राधा कृष्ण की आड़ में वासनापूर्ति का घिनौना कर्म किया। श्रृंगारिकता, अतिश्योक्ति, वक्रता, कानकुता ही इस युग के काव्य में प्रधान तत्व थे। संपूर्ण काव्य एक विशिष्ट रीति में आब(था। ऐसे युग में अपने साहित्यकार के कठिन कर्तव्य को बिहारी ने अन्य रीतिकवियों की अपेक्षा पूर्ण ईमानदारी से निभाया है।

4.8 बिहारी की बहुज्ञता–

'बहुज्ञता' का अर्थ है बहुत जानने वाला, ज्ञानी, बहुत विषयों का ज्ञाता। रीतिकालीन साहित्य में एकमात्रा बिहारी ऐसे कवि हैं जिनके पास अनुभव का इतना विपुल भंडार है जितना किसी के पास नहीं। बिहारी का सम्पूर्ण ज्ञान उनके व्यक्तिगत अनुभव का प्रतिरूप है। उन्होंने गांव की फटेंहाली भी देखी और राजमहल को खुशहाली भी। उन्हें मानव समाज के सज्जन से सज्जन और दुर्जन से दुर्जन व्यक्ति की पहचान थी। 'बिहारी सतसई' के सृजन में कवि का प्रतिभा बहुआयामी दृष्टिगत होती है। जिसका यहां संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है–

4.81. ज्योतिष का ज्ञान–

विविध ज्योतिषियों के संसर्म में रहने से कविवर बिहारी को ज्योतिष शास्त्रा का गहरा ज्ञान था। उदाहरणार्थ–

गंगलु बिंदु सुरंग मुख ससि केसरी आह गुरू।

इस नारी लहि संग रसमय किय लोचन जगतु।।

अर्थात मंगल के अंदर चंद की अंतर्दशा पर ध्यान दिलाया है। जो कि स्त्राी, पुत्रााादि अनेक सुखों का देने वाला होता है।

4.8.2 आयुर्वेद का ज्ञान

'बिहारी सतसई' में कवि का आयुर्वेद का व्यवहारिक ज्ञान दिखलाई पड़ता है। एक उ(रण में ऐसे वेद का वर्णन किया है जिससे पीनस रोग के लक्षण बताए हैं। एक अन्यत्रा उ(रण देखिए।

बहु धन है अहसानु कै पारौ देत सराहि।

वैद वधु हंति भेद सौ रही नाह मुंह चाहि।।

4.8.3 दार्शनिकता

बिहारी के कुछ दोहों में दार्शनिकता की भी छाया दिखती है। आत्मा परमात्मा के सम्बंध साथ साथ परमात्मा की व्यापकता इत्यादि सर्वजन संवेद्य सुलभ सि(ांत है उदाहरणार्थ–

मैं समझयो निरधार यह जगु कांचो कांच सौ।

एकै रूप अपार प्रतिबिम्बित सखियतु जहां।।

कर्मकांड– एक दो दोहों ने बिहारी ने कर्मकांडों की भी चर्चा की है जो तद्‌युग में प्रचलित थे जैसे हवन, यज्ञ आदि।

होमति सुखकरि कामना तुमहिं विलन की लाल।

कायशास्त्रा– श्रृंगार रस सि(कवि को कामशास्त्रा का भी पूर्ण ज्ञान था तभी वे उस नायक की देह पर वे सभी रति चिन्ह दर्शाते हैं जो उसे पर स्त्री मन से मिले उदाहरणार्थ–

पलक पीक, अंजन अधर, धरे बहावरू भाल।

आज बिले सुलभी करी, भले बने हो लाल।।

4.8.4 पौराणिक ग्रंथों का ज्ञान

बिहारी ने रामायण महाभारत आदि पौराणिक ग्रंथों से भी ज्ञान अर्जित कर अपने काव्य को सुशोभित किया है। उससे विभिन्न प्रसंग आदि लिए हैं। जैसे एक उ(रण में छायाग्रहिणी राक्षसी का वर्णन करते हैं और संदेश देते हैं कि इस संसार सागर को पार करने के बीच यहीं बाधक है–

या भव पारावर की उलधि पार को जाइ।

तिय छवि छायाग्रहिनी ग्रहै बीच ही आइ।।

4.8.5 कृषि ज्ञान–

बिहारी ने शास्त्रा के अतिरिक्त लोकव्यवहार में कृषि आदि का भी ज्ञान अर्जित किया है। उदाहरणार्थ वे निम्न छोड़े में बता रहे है कि फसलों का क्रमशः उपादान किया जाता है। पहले सन काटा जाता है उसके बाद कपास, फिर ईख और उसके बाद अरहर–

सूनु सूक्यौ, वील्यौ बनो, ऊखो लई उखारि

अरी छरी अरबों, घरि पर हरि जियनारि।।

4.8.6 संगीत ज्ञान–

बिहारी को संगीत का भान या चाहे उन्होंने संगीत शास्त्रा नहीं सीखा लेकिन वे जानते थे कि संगीत में डूबकर ही उसका आनंद लिया जा सकता है –

तंत्रीनाद कवित रस सरस राग रवि रंग।

अनबूढे बूढे तरै जे बूढ़े सब अंग।।

नीति मान–बिहारी ने जीवनानुभव से जो ज्ञान अर्जित किया उसे दोहों के माध्यम से नीति रूप में प्रस्तुत भी किया है –

नीति परागु नहिं मधुर वधु नहि विकासु इहिं काल।

अहीं! ली ही बंध्यौ आगे कौन हवाल।

रंगबोध–बिहारी चित्रकार नहीं थे लेकिन रंगों का ज्ञान रखते थे, उनके पारखी थे। तभी वे स्थान स्थान पर यह बताते हैं कि किस रंग के मेल से कौन सा रंग उभरेगा उदहारणार्थ –

अधर धरत हरि के परत ओठ दीठि पर जोति।

हरित बांस की बांसुरी इन्द्रधनुष सम होत।।

प्रेम रीति– बिहारी कामुक और श्रृंगारी वातावरण में प्रेम की रीति को जानते थे तभी वे प्रेम की रीति की विषमता को बताते हैं–

दृग उरश्रन टूटत कटुम्ब जुरत चतुर चित प्रीति।

परत गांठ दुरजन हिय दह नई यह रीति।।

समाज बोध–बिहारी अन्य रीतिकालीन कवियों की भांति चाहे दरबारी कवि थे लेकिन उन्होंने समाज की अपेक्षा नहीं की। वे समाज से ही अपने काव्य का विषय वस्तु का चयन करते है सभी वे परिवारों में संबधों की विभिन्न स्थितिया भी उजागर करते हैं जैसे–

कहति न देवर की कुवत कुलतिर कहल उराति।

पंजर मतं मंजार ढिग सुक लौं सूफति जाति।।

सौन्दर्य बोध– श्रृंगारी और लोलुप वातावरणों में भी उन्होंने सौन्दर्य की वास्तविक छत्रि को पकड़ा और उसे परिभाषित करने का प्रयास किया। तभी उनके काव्य में सौन्दर्य का सूक्ष्मतिसूक्ष्म शु(रूप देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ–

लिखने बैठि जाकी सखी महि–गहि गरब गरूर।

भये न केले जंगल के चतुर चितेरे कूर।।

भक्ति तत्व – रीतिकालीन श्रृंगारी कवि होने पर भी बिहारी के नायक नायिक ही उनके आराध्य हैं और उन्हें आधार बनाकर ही वे भक्ति पर बल देते हैं उदाहरणार्थ–

या अनुरागी चित की गति समुझे नहीं कोइ।

ज्यों ज्यों बूढै स्याम रंग त्यौ त्यों उज्जलु होइ।।

श्रृंगार ज्ञान–बिहारी श्रृंगार के तो रससि(कवि है उन्होंने श्रृंगार के संयोग और वियोग दोनों पक्षों को वर्णित किया है। जहां इनका संयोग श्रृंगार पक्ष सूक्ष्म, स्वाभाविक और मर्मस्पर्शी बना है वहां वियोग पक्ष नहीं। एक उ(रण देखिए–.

बत्तरसं लालच लालकी मुरली घरी तुकाइ।

सौहं भरै भौहगु हंसे देत कहत नटी जाइ।।

4.8.7 कला ज्ञान

बिहारी अपनी काव्य कला में दक्ष है उन्होंने अपनी कला के बल पर ही अपने काव्य में निहित एक एक दोह में गहन अर्थ भर दिये है। उनके दोहों में 'गागर में सागर' भरा है। उनकी विषय वस्तु और उसे अभिव्यक्ति देने वाला शिल्प दोनों महान हैं तभी एक सतसई ही उनका अपार, विपुल ज्ञान भंडार है। तभी उनके दोहा के बारे में कहा है–

सतसैया के दोहर ज्यों नावके के तीर।

देखन में छोटे लगे घाव करें गंभीर।।

4.8.8 अलंकार ज्ञान

बिहारी अलंकार के ज्ञाता हैं। उन्होंने अन्य कवियों की भांति अलंकार को अनपढ़, भेदस, प्रयोग नहीं किया है। उनका एक एक अलंकार सार्थक और सटीक रूप से प्रयुक्त हुआ है तभी उनका काव्य वैदीप्यमान है। उदाहारणार्थ यमक की छटा देखिए–

कनक कनक ते सौगुनी मादकता अधिकाइ

या खाए बौराइ जय पापार बौराइ।।

4.8.9 शब्द ज्ञान

बिहारी ने दोहे को आधार बनाया है जिससे एक एक शब्द साधकर रखा हुआ है। तभी एक एक दोहा एक एक महाकाव्य का गुण रखता है। उदाहरणार्थ बिहारी ने प नुकबल अपने नायक या नायिका के नाम दिए हैं–

चिरजीवों जोरि जुरै क्यों न सनेह गंभीर।

को घटिए वृषभानुजा में हलधर के बीर।।

4.8.10 अनुभाव ज्ञान

बिहारी अनुभाव बोध में कुशल चितेरे है। उन्होंने नायक नायिका की सभी क्रियाओं का मनोवैज्ञानिक ढंग से अवलोकन किया। उन क्रियाओं को एक एक शब्द का जामा पहनाकर प्रस्तुत किया है। उदाहरणार्थ–

कहत नटत रीझत खिजत मिलत मिलत लजियात।

भरै भौनु में करत है नैननु हो सौ बात।।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि बिहारी ने जीवन जगत के विभिन्न अनुभव लिए शास्त्रों का भी पाठ किया तभी उनके काव्य में उनका सम्पूर्ण मान, अनुभव चिंतन, कला साक्षात हो उठी है और एक ही सतसई में सर्वस्व समेटने का अद्‌भुत कर्म करने का अदम्य साहस दिखाया है।

4.9 बिहारी की अनुभाव योजना

भारतीय काव्यशास्त्रा के रस सि(ांतों में रसनिष्पति के लिए ;स्थायी भाव, अनुभाय, संचारी भावद्ध को स्वीकारा गया। अर्थात भाव के चार भेद है स्थायी भाव कहलाते हैं। जो स्थायी रूप में हमारे हृदय में विद्यामान रहते है और समय आने पर अद्‌बु(हो जाते हैं। स्थायी भावों को जगा देने के जो कारण होते हैं उन्हें विभाव कहते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं उद्‌दीपन और आलम्बन जो भाव उठे हुए भावों

के पीछे अनुकरण का है वे अनुभाव अनु ;पीछेद्ध भाव कहलाते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। सात्विक और कार्मिक। स्थायी भावों के बीच उठाकर स्थायी भाव को पुष्ट करने वाले भाव संचारी या व्यभिचारी भाव कहलाते हैं। इनकी संख्या तैंतीस मानी जाती है।

काव्यशास्त्रीय सि(ांतों में आश्रय ;जिसके मन में भाव उत्पन्न होता है। की चेष्टाओं को अनुभाव की संज्ञा दी है। श्रृंगार के अंतर्गत नायक नायिका पर आश्रय आलंबन ;जिसे देखकर आंश्रय के मन में भाव उत्पन्न होता हैद्ध होते है। यह कहना सर्वथा भ्रांति होगी कि नायक नायिका के प्रति आसक्त है और नायिका अनासक्त या निर्विकार कविवर गुप्त जी के अनुसार 'दोनों ओर प्रेम पलता है' अतः नायक नायिका दोनों की प्रणय चेष्टाएं अनुभाव मान सकते हैं।

श्रृंगार रस का चित्राण जहां होता है वहां अनुभाव की स्थिति प्रबल रूप में उभरती हैं। किंतु ये अनुभव कवि प्रतिभा के आधार पर ही प्रभावोत्पादक और रसाभिव्यंजन बनते हैं। 'बिहारी सतसई' का अनुभाव विधान देखकर अनायास ही उनकी काव्य प्रतिभा की दाद देनी पड़ती है। बिहारी की अनुभाव योजना में नायक नायिका की एक–एक क्रीडा को एक एक चेष्टा को साकार कर दिया है। उपर्युक्त विवेचन में अभी बताया गया है कि अनुभाव के दो प्रकार हैं– सात्विक ;अनापास स्वतः ही स्फुटित होने वाले लक्षण जैसे स्वेद, स्तंभ, स्वरगंग, कंप, रोमांचद्ध और काध्कि ;आश्रयापूर्वक की गई शारीरिक चेष्टाएं भागना, डसना, रोना, चिल्लाना, सिकुड़ना, कहना आदिद्ध। बिहारीलाल के दोहों में इन अनुभाव प्रयोगों के कौशल को यहां सहज ही देखा जा सकता हैं उदाहरणार्थ–

चकी जकी सी छ्वै रही, बूझै बोलति नीठि।

कहू हीठि लागी, लगी बै काहू की डीठि।।

यहां पूर्तान नायिका चकित सी, स्तभित सी होकर बैठी है। पूछो तो मधु वचनों से बड़ी कठिनाई से बोलती है अन्यथा फिर चुप लगता है इसकी दृष्टि कहीं लग गई है अर्थात यह किसी के ध्यान में रखोई हुई है। इसको किसी की नजर लग गई है। अतः यहां सुधबुध खोकर बैठने से स्तंभ सात्विक भाव है। एक उ(रण और देखिए जहां नायिका का स्वरभंग हो गया है–

बुरति न ताल न तान की उठयो न सु ठहराई।

रेरी राज बिराजिरी बेरी बोल सुनाई ।।

अर्थात नामिका कोई राग गाना चाहती भी कि, सभी उसे नायक का स्वर सुनाई पड़ गया जिसके कारण वह ताल और तान सबके भूल गई। अर्थात उसे स्वरभंग सात्विक भाव हो गया। स्थिति को सब कुछ सम्पूर्ण और प्रभावी बनाने के लिए बिहारी मे नामक नायिकाओं की विभिन्न शारीरिक चेष्टाएं भी विदित की हैं। उदाहरणार्थ–

कर समेटि करू भूज उलटि खरें सीस पटू डारि।

काफौ बन बांध्े व यह जूरौ बांधन डारि।।

यहां पर बाल समेटना, बांड उलटना आदि नायिका की कामिक चेष्टाएं है। एक अन्य उ(रण देखिए जहां बिहारी ने सरोवर– स्नान करती नायिका की चेष्टाओं को प्रस्तुत क्रिया है–

मुंह पखारि मुडहत भिजै सज कर छुवाई

नौरू ऊचे घटे ते नारि सरोवर न्हाइ ।।

अर्थात नायिका मुंह धोकर साड़ी के छोर भिगोकर, सिर पर सजल हाथों को घुमा कर और मस्तक ऊंचा करके घुटनों के बल स्थित सरोवर में स्नान कर रहीं है। यहां नायिका की सभी चेष्टाएं कामिक हैं। सात्विक और कायिक अनुभाव का समन्वित रूप भी बिहारी की दोहों में मिलता है। उदाहरणार्थ –

मुख उधारि पिउ लखि सहत रहयो न गौ मित सैन।

फरके ओठ उठे पुलकि गए उधरि जुरि नैन ।।

यहां नायक ज्यों ही पधारा, नायिका आंचल से मुंह ढककर होने का बहाना करके लेट गयी। नायक ने सोचा, जरा मुहं उघाड़कर देख ही ले सचमुच नींद आ गई या मुझे छकाने का बहाना है। बस प्रिय ने ज्यों ही मुख से वस्त्रा उठाकर देखा कि शयन का बहाना न रह पाया। ओठ स्वतः फड़कने लगे, शरीर मूलक से रोमांचित हो गया, बंद नेत्रा अपने आप खुलकर प्रिय के नेत्राों से जुड़ गए। इस प्रकार के अनेक अनुभाव मुक्त उ(रण बिहारी के दोहों में मिलते है।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि बिहारी का अनुभाव विधान अत्यंत प्रभावी एवं सशक्त तो है ही, साथ ही वह काव्यशास्त्रीय सि(ांतों के अनुकूल भी है। सूक्ष्मातिसूक्ष्म भाव, चेष्टा, आदि को बिहारी ने बड़े ही कौशल से अभिव्यक्त किया है। तभी वे सफल चित्राकार कहे जाते हैं।

4.10 बिहारी की काव्य कला

कविवर बिहारी एक सजग सर्जक कलाकार हैं। जो वचन भंगिमा में सि(हस्त हैं। बिहारी के काव्य को रीतिकाल में यदि श्रेष्ठता मिली हैं तो उसके पीछे उनकी काव्य कला ही निहित है। बिहारी की ख्याति का एक कारण उनकी सूक्ष्मभिवंशी अंतर्दृष्टि रही है जिससे उन्होंने बड़े ही सूक्ष्म कोमल और मधुर चित्रा प्रस्तुत किए हैं।

भाव और उसकी अभिव्यक्ति के रूप सामजस्य से ही कला का निर्माण होता है। अतः जिस कवि की विषय–वस्तु या भाव पक्ष जितना सबल हो उतनी ही उसकी अभिव्यक्ति भी सफल होनी चाहिए तभी किसी भी कलाकार की काव्य कला उत्कृष्ट कहलाने की अधिकारिणी होती है।

बिहारी रीतिकाल के उन चतुर शिल्पियों में से है। जिन्होंने बड़े से बड़े कलात्मक दृष्टि से अभिव्यक्त ही नहीं किया अपितु बिंबित किया उसकी सतसई में विभिन्न विषयों का समावेश है। जिसमें उनकी काव्य कला के विभिन्न विशिष्ट रूप सहज ही देखे जा सकते हैं। यहां संक्षेप में उनकी कला की श्रेष्ठता के कुछ बिंदुओं का उठाया जा रहा है।

4.10.1 उत्कृष्ट पद संघटना

बिहारी ने मुक्तकार की भांति कविकर्म निभाया उन्होंने सबसे छोटे छंद दोहे को आधार बनाकर बड़े ही कौशल से उसमें अर्थ संयोजन किया है। भावानुरूप शब्द चयन की दृष्टि से बिहारी की लेखनी का लोहा मानना पड़ता है। उदाहरणार्थ–

कहत नटत रीझत खिजत मिलत मिलत लजियात।

भरे भौनू में करत हैं नैननु ही सौं बात ।।

4.10.2 समास प(ति

बिहारी अपने कथ्य को इतना कूट–कूट कर भर दिया है कि उसमें समास प(ति का गुण आ गया है। इसी से बिहारी के सम्पूर्ण भाव रहते हैं। इसी गुण का आधार ऊपर कहा गया है कि इन्होंने अपने काव्य में 'गागर में सागर' भर दिया जाता है। या उन्हें 'नानक के तीर' की संज्ञा दी है। एक उ(रण देखिए –

चिरजीवी जोरि जुरै क्यों ने स्नेह गंभीर।

को घटि ऐ वृषभानुजा वे हलधर के बीर।।

4.10.3 वैवमध्य की नियोजना–

बिहारी के काव्य में वाग्विदग्धता दग्धता एवं क्रियाविदग्धता के उदाहरणों के आधार पर कवि की कल्पना कुशलता का परिचय प्राप्त हो जाता है जैसे मंगलाचरण के छंद में भावना की सुगंध, श्रृंगार की कोमलता और कला पक्ष की कारीगरी एक साथ निम्नरूप में देखे जा सकते हैं–

मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोई

जा तन की हाई परै स्थान हरित दुति होइ ।।

4.10.4 अनुभावप योजना

बिहारी ने अपने काव्य में अनुभावों की ऐसी योजना की है जिससे उनके एक एक भाव साकार एवं सजीव हो उठते हैं। इनके काव्य में नायक नायिकाओं की भाव भगिमाओं, चेष्टाओं का मनोवैज्ञानिक रूप देखने को मिलता है। उदहारणार्थ –

बतरस लालच लाल की मुरली धरी लुकाइ ।

सौ भरे भोहनु हंसे देन करत नटि जाइ।।

4.10.5 वर्णयोजना/रंग बोध

डॉ. नगेन्द्र के अनुसार बिहारी ने रेखाचित्रा केवल आंके ही नहीं, अपितु उनमें रंग भी भरे हैं। सधि के रंग हो, नायिका के रूप या देह की कांति की बात हो या प्रकृति के उपादानों का वर्णन हो उन्होंने सर्वत्रा कहीं तीखा कहीं गाढ़ा, कहीं हल्का, कही चटकीला रंग भरा है। उदाहरणार्थ एक दोहा देखिए –

अधर धरत हरित के परत ओंठ दीठि पट जौंत।

हरित रंग की बांसुरी इन्द्रधनुष संग होत।।

उपर्युक्त भावपक्ष की भांति बिहारी की कला से उनके शिल्प का भी सुन्दर प्रयोग देखा जा सकता है।

4.10.6 भाषा प्रयोग–

कविवर बिहारी की भाषा सर्वत्रा अत्यंत व्यवस्थित एवं व्याकरण सम्मत है। ब्रजभाषा के व्याकरण की कसौटियों पर खरी उतरती है। बिहारी की पहले किसी की भी भाषा परिमार्जित नहीं मिलती है। बिहारी को अपनी भाषा पर बात प्रतिशात अधिकार था। पं. विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने ठीक ही कहा है कि इतनी ठोस या प्रौढ़ भाषा लिखने वाला हिन्दी में दूसरा कवि नहीं हुआ। बिहारी की भाषा प्रायः क्लिष्टता, दुरुहता, यामतव्य एवं अश्लीलतत्व आदि दोषों से दूर है।

4.10.7 अंलकारिकता –

बिहारी ने अपने काव्य में वस्तु और भावों को स्पष्ट करने के लिए डी अलंकारों की योजना की है। अलंकारों द्वारा इन्होंने भाषा सौष्ठव और चुस्ती ला दी है। बिहारी के दोहों में शायद ही कोई दोहा हो जो अलंकारविहीन हो। उदहारणार्थ कुछ अंलकार द्रष्टव्ट हैं–

कनक कनक ते सौगुनी नादकता अधिकाय।

जा खाएं बौराए जन वा पाये बौराय। यमक

या अनुरागी पित की गति सबुझे नहीं कोय।

ज्यों ज्यों मूहै स्थान रंग त्यौं त्यौं उज्जवल होय विरोधभास

सोहत ओढे पीतु पटु स्थान सलौने नात।

जनौ नीलमनि सैल पर आतषु परयो प्रभात ।। उत्प्रेक्षा

4.10.8 सरसता

बिहारी रससि(कवि हैं उनकी भाषा ने उनकी रसधार को लोकोतर शरीर प्रदान किया है। भाषा की पिचकारी से रस की धार सर्वत्रा अति मोहक होकर हीकर ही प्रगट हुई है। रसानुरूप ही कवि ने वर्ण योजना रखी है। जिससे काव्य सरस हो गया है। उदाहरणार्थ–

कहत नटत रीझत खिजत मिलत मिलत लजियात।

4.10.3 ध्वन्यात्थकता –

बिहारी ने ध्वन्यात्मक वर्णों की ऐसी नियोजना की है जिससे भाव सौन्दर्य उत्पन्न हो रहा है। उदाहरणार्थ–

बस सिंगार गंजन किए कंजनु भंजनु वैन ।

अंजनु रंजनु हू बिना खंजनु गंजनु नैन।।

यही नहीं इसके अतिरिक्त इनके काव्य में मुहावरों आदि का भी प्रयोग कर भाषा को प्रवाहमान और प्रभाव बनाया है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि बिहारी का काव्य उनकी कला के कारण गरिमा पाता है। उनका काव्य सूक्ष्म सौन्दर्य बोध, श्रृंगार रस, नीति, ज्ञान, भक्ति के गुण से ओतप्रोत है। जिसकी अभिव्यक्ति में उनका शिल्प भी उतना ही प्रबल और प्रभावी रूप में उभर कर आया है। अतः बिहारी की काव्य कला अशक्त और उत्कृष्ट है।

4.11 सारांश

सारांश रूप में हम कह सकते है कि रीतिकाल के रितीसि(कवि रहे है। उन्होंने अपने काव्य में श्रृंगार रस की प्रधनता के साथ–साथ अलंकारों की झड़ी भी लगा दी। उनके काव्य में नायिका के नख–शिख का चित्राण हुआ है और साथ ही नायिका भेद का चित्राण हुआ है। बिहारी लाल ने अपनी सतसई में विविध क्षेत्राों में जानकारी का परिचय दिया है। उन्होंने काव्य के साथ–साथ अन्य क्षेत्राों का भी वर्णन अपने काव्य में किया है। उन्होंने सतसई में शब्दों में चमत्कार तथा व्यंग्य की प्रधनता के साथ अपनी भावाभिव्यक्ति की है। इसलिए कहा जाता है कि बिहारीलाल ने गागर में सागर भर दिया है।

4.12 व्याख्या भाग

1. **अपने अंग के जानिकै, जोवन– नृपति प्रवीन।**

स्तन, बन, मैन, नितंब को, बड़ौ, इजाफा कीन।।

प्रसंग– कोई दूती नायक से मुग्धा नायिका के सौन्दर्य की प्रशंसा कर रही है अथवा स्वयं नायक किसी मुग्धा गायिका के शारीरिक सौन्दर्य पर रीझकर अपने मन से कहता है।

व्याख्या – यौवन रूपी चतुर राजा ने उस मुग्धा नायिका को अपने पक्ष का जानकर उसके कुच, मन, नेत्रा और नितंबों बहुत अधिक वृ(कर दी है। भाव यह है कि यौवन के आने पर उस नायिका के कुछ बढ़ने लगे है, मन में काम भावनाएं उठने लगी है. नेत्रा विशाल होने लगे हैं और नितम्बों में भारीपन आता जा रहा है।

विशेष–

1. जिस नायिका के तन में नवीन यौवन का आगमन होता है उसे मुग्धा नायिका कहते हैं। अंतः इस छंद की नायिका मुग्धा है। भानुवद्रत ने इसे अंकुरित यौवना बताया है। आचार्य विश्वनाथ के अनुसार यह प्रथनावतीर्ण यौवना मुग्धा नायिका है।
2. 'जीवन नृपति' में निरंग रूपक अलंकार है।
3. स्तन, मन, नैन, नितंब को बड़ो इजाफा कीन में स्तन, मन, नैन और नितंब का एक ही धर्म 'इजाफा कीन' का कथन होने से तुल्ययोगिता अंलकार है।
4. अहेतु में हेतु की सम्भावना करने से हेतुत्प्रेक्षा अलंकार है।
5. नंदकल छंद है। ;अक्षर 35 गुरु, 13, लघु 22द्ध
6. कांति का विस्तार होने के कारण दीप्ति अयलज अलंकार है।
7. 'नृपति' शब्द का प्रयोग अत्यधिक उपयुक्त होने के कारण पर्यायवक्रता है।

2. **पिय– बिछुरन को दुसहु दुख, हरषु जात प्योसार।**

दुर्जोधन लौं देखियत, राजत प्रान एडि बार।

प्रसंग – नायिका अपने मैहर जा रही है। उस समय उसकी जो दुविधामयी दशा है। उसका वर्णन एक सखी अपनी दूसरी सखी से कर रही है।

व्याख्या – इस नायिका को अपने प्रियतम से बिछुड़ने का दुसहा दुःख भी है और मैहर जाने का हर्ष भी है। अतः इस बार यह दुर्योधन की भाति शोक और हर्ष की उस समान स्थित में दिखाई दे रही है जिसमें दुर्योधन ने अपने प्राणों का त्याग किया था।

विशेष –

1. नायिका ;उपमेयद्ध, दुर्योधन ;उपमानद्ध, लौं ;चाचक शब्दद्ध और तजत ;साधारणधर्मद्ध अतः पूर्णोपमा अलंकार है।
2. 'एहि वार' से यह स्पष्ट होता है कि यह नायिका मुग्धा से मध्या की अवस्था में आ गई है।
3. वारण छंद हैं ;अक्षर 38, गुरु, 10 लघुद्ध
4. भाव साम्य के लिए एक अन्य दोहा देखिए–

आये पिय परदेस से नये सौति के धाम।

हरदः विषाद भयो भई, दुरजोधन सी बाम।

3. **अज्यों तरौनां ही रह्यौ, श्रुति सेवत इक रंग।**

नाक बास बेसरि लह्यौ, बसि मुक्तनु कैं संग।

प्रसंग – इस दो में वेद शास्त्राों की निंदा और सत्संगति की प्रंशसा की गई है।

व्याख्या– प्रथम अर्थ ;कर्णफूल के पक्ष मेंद्ध कर्णफूल कानों का एक रीति से सेवन करता हुआ है अर्थात उसकी स्थिति अधोवर्ती ही बनी हुई है और बेसर ने मोतियों के साथ रहकर नासिका पर निवास प्राप्त कर लिया है अर्थात ऊंचा स्थान पा लिया है।

द्वितीय अर्थ – ;वेद पाठियों के पक्ष मेंद्ध निरन्तर रूप से वेदों का पाठ करता हुआ मनुष्य आज तक भी उ(ार हुए बिना ही रह रहा हैं। और अधम प्राणी ने मुक्त लोगों के साथ रहकर स्वर्ग में निवास प्राप्त कर लिया है।''

विशेष –

1. 'तरयौना', 'श्रुति', 'नाक', 'बेसरि', और 'मुकुतनु' शब्द श्लिष्ट है। इन श्लिष्ट शब्दों में प्रकृत विषय के अतिरिक्त वेद निदा और सत्संगति की प्रंशसा सूचनीय है। अतः यहां श्लेष से परिपुष्ट मुद्रा अंलकार है।
2. यहा शब्दशक्ति मूलक संलक्ष्यक्रम व्यंग्य ध्वनि है। क्योंकि 'तर्यौना', 'श्रुति', 'नाम' और 'मुकुसनु' से ही अन्यर्थ की प्रतीति होती है
3. नदकल छंद है ;अक्षर 35, तुर, 13, लघु 22द्ध

4. **कहत, नटत, रीझत, खीझत, विलत, खिलत, सजियात।**

भरे भौन में करत है नैनहु की सौं बात।।

प्रसंग – प्रस्तुत दोहे में कविवर बिहारी नायक और नायिका चतुराई और उनकी प्रेमलीला का वर्णन करते हुए लिखते हैं कि

व्याख्या – गुरुजनों से भरे भवन में जहा पर नायक नायिका के वार्तालाप की सुविधा नहीं है ये दोनों आंखों के सकेंतों से ही अपने भावों को व्यक्त करते हैं। नायक आंख के संकेत से नायिका के प्रति प्रेम प्रदर्शित करता है और रति की प्रार्थना करता है। नायिक दिल से चाहते हुए भी नायक को छकाने के लिए इन्कार कर देती है। नायक उसकी इस भाव भंगिता पर भी मुग्ध होने का संकेत करता है। नायिका, कृत्रिाक खीझ को प्रकट करती है। दोनों नायिका एकाएक गुरुजनों का ध्यान कर लजा जाती है। इस प्रकार लोगों से भरे हुए घर में नायक और नायिका आंखों से ही बात कर रहे हैं।

विशेषः

1. 'कहत, रीझत, खिलस' और 'नटत, खिजत, लजियात क्रियाओं का एक–एक कर्ता होने के कारण कारकदीपक अलंकार हैं।
2. नेत्रा बात नहीं कर सकते, फिर भी उनके द्वारा बात करने का वर्णन है, अर्थात प्रतिबधक होते हुए भी कार्य का होना वर्णित है। अतः विभावना ;तृतीयद्ध अंलकार है।

3. यहां पर व्यंग्यार्थ वाच्यसि(होकर गुणीभूत होते हुए भी चमत्कार पर्यवसायी होने के कारण उत्तम काव्य की विद्यमानता है।

4. विकल छंद है। ;अक्षर 36, गुरु 6, लघु 30द्ध

5. यहां 'नैननु' का प्रयोग वाक्य रचना के कारण करणकारक में हुआ है किन्तु क्रियाशील उन्हीं में है। अतः इनका कर्ता के अंतरंग होने से क्रियावैचत्रियषकता है।

6. नायिका परकीया क्रिया विद्ग्धा है।

7. यहां पर गर्व, अमर्ष, हर्ष इन तीन संचारी भावों की एक साथ योजना हुई है।

8. बिहारी, गागर में सागर भरने के लिए प्रसि(है।

9. प्रस्तुत दोहे ने अनेक क्रियाएं एक साथ अंकित हैं।

5. नहिं पमगु नहिं मधुर, नहिं विकास इहिं काल।

अली! कली ही सौं बिंध्यो, उमगैं कौन हवाल।

प्रसंग – नवविवाहित पत्नी के प्रेम में डूबकर अपने कर्तव्यों को भी भूल जाने वाले महाराज जयसिंह के प्रति कवि की उक्ति है।

व्याख्या – हे भ्रमर! अभी तक इस काल में न तो पराग है, न मधुर मकरंद है और न इसका विकास ही हुआ है। यदि तू इस कली से ही बंध गया, अर्थात इस पर मोहित होकर अभी से सब कुछ भूल गया तो जब यह कली पराग और मधुर मकरंद से युक्त हो कर विकसित होगी, तब तेरी क्या दशा होगी?

भाव यह है कि जिस नायिका के प्रेम में डूबकर तुम अपने कर्तव्यों को भूल बैठे हो, जबकि वह अभी तक पूर्ण यौवन को प्राप्त नहीं हुई है, तो जब वह पूर्ण यौवन को प्राप्त होगी, तब न जाने तुम्हारी क्या दशा होगी?

विशेष –

1. इस छंद का प्रसंग मुग्धा नायिका के प्रति आसक्त नायक से भी सम्ब(किया जा सकता है।

2. यहां जो यक्तव्य है यह साधर्म्य के कारण भ्रम तथा आसक्त पुरुष पर समान रूप से घटित होता है अतः अन्योक्ति अलंकार है।

3. नवयौवन के आगमन के कारण तथा उसका ज्ञान न होने से इस छंद की नायिका अज्ञात यौवन मुग्ध नायिका है।

4. अक्षर 36, गुरु लघु 24 होने से यहां पयोध्र छंद है।

4.13 कठिन शब्दों के अर्थ

जोबन – नृपति–यौवन रूपी राजा। प्रबीन – कुशल। बिछुरन – वियोग। दुसहु – असहनीय। प्यौसार – बाप का घर। अजौ – आज तक। तर्यौना – अधेवर्ती–आभूषण। नटत – मना करना। रीझत – आकर्षित होना। भौन – भवन। बंध्यौ – बांध्ना। इहिं काल – इस समय। हवाल – दशा।

4.14 स्वयं आकलन के प्रश्न

1. बिहारी रीतिकाल की किस धरा के कवि है?
2. बिहारी का जन्म कब और कहां माना जाता है?
3. बिहारी की प्रसि(रचना का नाम लिखो।
4. बिहारी की मृत्यु कब मानी जाती है?
5. बिहारी सतसई में कितने दोहे है?

4.15 स्वयं आकलन प्रश्नों के उत्तर

1. उतर – रितिसि(
2. उतर – 1603 ग्वालियर।
3. उतर – बिहारी सतसई।
4. उतर – 1663
5. उतर – 719

4.16 सन्दर्भित पुस्तक

1. बिहारी – जगन्नाथ दास रत्नाकर।
2. बिहारी – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र।
3. कविवर बिहारीलाल – राधकृष्ण दास।
4. बिहारी सतसई – पदम सिंह शर्मा।
5. बिहारी की काव्य कला – उदयभानु हंस।

4.17 सात्रिाक प्रश्न

1. बिहारी लाल की साहित्यिक परिचय बताएं।
2. बिहारी सतसई की काव्यगत विशेषताएं लिखिएं।
3. बिहारी लाल की बहुज्ञता का वर्णन कीजिए।
4. बिहारी लाल की काव्य भाषा शैली का चित्राण कीजिए।

अभ्यास हेतु लघुत्तरीय प्रश्न

1. रीतिकालीन रीतिसि(कवियों में कौन से कवि आते हैं? ;बिहारीद्ध

2. बिहारी ने किस ग्रंथ की रचना की? ;सतसईद्ध

3. बिहारी किस आश्रयदाता के कवि थे? ;जयपुर नरेश जयसिंहद्ध

4. 'नहि परागु नहि मधुर मधु नहि' विकास इति काल

   अली कलीं ही सौ बंध्यौ आगे कौन ह्वांल।' यह दोहा बिहारी ने किसे संबोधित करते हुए लिखा है। ;अपने आश्रयदाता जयपुर नरेश जयसिंह कोद्ध

5. बिहारी के वियोग श्रृंगार संबन्धी घोड़ों में क्या अवगुण मिलता है। ;ऊहात्मकताद्ध

6. बिहारी का जन्म कब हुआ। ;संवत् 1652 मेंद्ध

7. बिहारी की मृत्यु कब हुई। ;संवत् 1720 मेंद्ध

8. बिहारी ने काव्य रचना के लिए कौन सा छंद अपनाया है। ;दोहाद्ध

9. बिहारी ने किस काव्य में अपना काव्य सृजन किया है। ;मुक्तकद्ध

10. 'कमक कनक तो सौगुनी मादकता अधिकार।

    या खाइ वौराइ जग वा पाइ बौराइ।।– बिहारी के इस दोहे में कौन सा अलंकार प्रधान है। ;यमकद्ध

11. बिहारी ने किन भाषा में अपने काव्य का सृजन किया है। ;ब्रज भाषाद्ध

12. 'मेरी भव बाधा हरौ राधा नागरि सोइ।

    जा तन की झांई परै स्याम हरित घुति होइ।–बिहारी के इस दोहे में कौन सा अलंकार प्रधान है। ;उलेषद्ध

13. बिहारी के काव्य में 'समाहार शक्ति' का गुण है। यह कथन किसका है। ;आचार्य रामचन्द्र शुक्लद्ध

14. बिहारी पर सबसे अच्छी टीका किसने लिखी है। ;जगन्नाथ दास रत्नाकरद्ध

15. 'कहत नहत रीझत खिजत मिलत मिलत लजियात।

    भरे मौनु में करत है मैननु ही सौ बात– यह दोहा किस कवि का है। ;बिहारीद्ध

16. 'बिहारी की सतसई शक्कर की मीठी रोटी है उसे जहां से तोड़ो मीठी ही लगती है।' किसका कथन है। ;पदमसिंह शर्माद्ध

17. 'बजभाषा के साहित्य में 'बिहारी सतसई' का दर्जा बहुत ऊंचा है।'– किसका कथन है। ;पदमसिंह शर्माद्ध

18. ‘बिहारी के दोहों में न तो कोई बड़ी अनुभूति है न कोई ऊंची बात सिर्फ लड़कियों की कुछ अदाएं है, मगर कवि ने उन्हें कुछ ऐसे ढंग से चित्रित किया है कि आज तक रसिकों का नम कचोट खाकर रह जाता है।’ यह कथन किसका है। ;रामधारी सिंह दिनकरद्ध

19. ‘बिहारी ने केवल रेखाचित्रा आंके ही नहीं अपितु उसमें रंग भी भरे हैं।’– किसका कथन है। ;डॉ. नगेन्द्रद्ध

20. ‘बिहारी का भाषा पर सच्चा अधिकार था।’ किसका कथन है। ;डॉ. शिवकुमार शर्माद्ध

21. ‘सतसैया के दोहरे ज्यों नायक के तीर।

देखन में छोटे सगैं भाव करें गंभीर। ये पंक्तियां किस कवि की प्रशंसा में कही हैं। ;बिहारीद्ध

22. ‘तौ पर वारौं उरवसी सुनि राधिका सुजान।

तू मोहन के उरवसी ह्वै उरवसी समाना

किसका दोहा है। ;बिहारीद्ध

23. रीतिकाल के किस कवि ने अपने शब्दों में’ ‘गागर में सागर’ भरा है। ;बिहारीद्ध

24. रस की किस योजना में कवि बिहारी दक्ष हैं। ;अनुभाव योजनाद्ध

25. बिहारी ने अपनी सतसई किसे समर्पित की है। ;राजा जयसिंह कोद्ध

26. बिहारी ने अपने नंगलाचरण के छंद में किसकी स्तुति की है। ;नागरी राधा कीद्ध

27. घनानंद की प्रेमिका का क्या नाम है। ;सुजानद्ध

28. घनानंद किस बादशाह के आश्रयदाता थे। ;मुहम्मद शाह ‘रंगीले’द्ध

29. रीतिकाल की समयावधि रामचन्द्र शुक्ल ने क्या मानी है। ;संवत 1700–1800द्ध

30. रीतिकाल को ‘श्रृंगारकाल’ किसने नाम दिया। ;विश्वनाथ प्रसाद मिश्रद्ध

31. रीतिकाल को ‘अंलकृत काल’ नाम किसने दिया। ;मिश्र बंधुओंद्ध

32. रीतिकाल को ‘कलाकाल’ की संज्ञा किसने दी थी। ;रमाशंकर शुक्ल ‘रसाल’द्ध

33. ‘प्रेम की पीर’ का कवि किसे रीतिमुक्त कवि कहा गया। ;घनानंद कोद्ध

34. रीतिमुक्त कवियों को और क्या संज्ञा दी गई। ;स्वच्छंदतावादी कविद्ध

35. मुहम्मद शाह ‘रंगीले’ के दरबार से निकलकर घनानंद कहां गए थे। ;वृंदावनद्ध

36. घनानंद बादशाह ‘रगीले’ के यहां क्या कार्य करते थे। ;मीरमुंशी थेद्ध

37. घनानंद की मृत्यु कब हुई। ;संवत् 1817 मेंद्ध

38. ‘इश्कललता’ किसकी रचना है। ;घनानंदद्ध

39. घनानंद के प्रशंसकों में सबसे बड़े आलोचक कौन थे। ;ब्रजनाथद्ध

40. घनानंद की कविता को समझने के लिए हृदय की आंख चाहिए– यह विचार किसका है। ;ब्रजनाथ काद्ध

41. प्रेम के मार्ग को अत्यंत सीधा मानने वाले थे। ;घनानंदद्ध

42. 'तुम कौन हौं पाटी पढै सो लला, मन लेहु पे देहु छटांक नहीं'– किसकी पक्ति है। ;घनानंदद्ध

42. 'सुजानहित' किसकी रचना है। ;घनानंदद्ध

43. घनानंद को 'ब्रज भाषा प्रवीन' किसने कहा। ;ब्रजनाथद्ध

44. 'लोग हैं लागि कवित बनावत, मोहि को मेर कवित बनावत'– किसी पंक्ति है। ;घनानंदद्ध

45. 'लाजनि लपेटि चितवन भेद भाव भरी,

लसित ललित सोल चत्रा तिरछनि में।' नायिका की आंखों के सौन्दर्य के बारे में यह किसने कहा है। ;घनानंदद्ध

46. किस रीति युक्त की कविता उक्ति वक्रता, चमत्कार से परे शु(सात्विक, सहज, सरल एवं भावुक है। ;घनानंद कीद्ध

47. 'हीन भए जल मीन अधीन, कह कछु नो अकुलाने समाने।

नीर सनेही को लाए कलंक निरास हवै कायर त्यागत प्रानै।। किसकी पंक्तियां है। ;घनानंदद्ध

48. किन कवियों के प्रेम में विषमता का गुण है। ;रीतिमुक्त कवियोंद्ध

49. किन कवियों का प्रेम एकतरफा है। ;रीतिमुक्त कवियोंद्ध

50. रीतिमुक्त कवियों को कविता का मूलाधार क्या है। ;प्रेमद्ध

51. 'मौन अधि की पुकार' किसकी है। ;घनानंदद्ध

52. 'रावरे रुप की नीति अनूप, मयो नयो लागत ज्यो ज्यों निहारियै'– किसकी पंक्ति है। ;घनानंदद्ध

53. 'स्वच्छंदतावादी काव्य भावित होता है, बु(बोधित नहीं'– किसका कथन है। ;आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदीद्ध

54. रीतियुक्त कवियों को उमंग के आदेश पर थिरकने वाले कवि किसने कहा। ;ननोहर लाल गौड़द्ध

55. 'बोडी तुम एक तुम नौं सब अनेक, कहा कछु चंदहि चकोरन की कमी है।' किसकी पंक्तियां है। ;घनानंदद्ध

56. 'विरह तो घनानंद की पूंजी ठहरा'। किसका कथन है। ;रामधारी सिंह दिनकरद्ध

57. घनानंद के विषय में किसने कहा कि 'प्रेम मार्ग का ऐसा प्रवीण व धीर पथिक ब्रजभाषा का दूसरा कवि नहीं हुआ। ;आचार्य रामचन्द्र शुक्लद्ध

58. 'बिहारी की काव्य फला' किसी पुस्तक है। ;उदयभानु सिंहद्ध

59. ‘घनानंद की काव्य साधना’ के रचयिता कौन है। ;डॉ. सभापति विश्वद्ध

60. ‘घनानंद और स्वच्छंद काव्यधारा’ के रचयिता कौन हैं। ;डॉ. मनोहर लाल गौड़द्ध

61. रीतिसि(कवियों के रूप मे एकमात्रा जाने वाले कवि कौन है। ;बिहारीद्ध

62. जिन कवियों ने लक्षण ग्रंथ के साथ–साथ उनपर आधारित कविता भी की वे रीतिकाल की किस कोटि में आते हैं। ;रीतिबद्ध्द्ध

––––––

कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न

प्र. 1 बिहारी की बहुज्ञेयता पर प्रकाश डालिए?

प्र. 2 बिहारी की अनुभाव योजना का वैशिष्ट्य बताइए?

प्र. 3 मुक्तक काव्य परंपरा में बिहारी का स्थान निर्धारित कीजिए?

प्र. 4 बिहारी के श्रृंगारेतर काव्य में उल्लेख कीजिए?

प्र. 5 बिहारी ने अपनी सतसई में अनेक स्वाद भरे हैं– सि(कीजिए?

प्र. 6 बिहार का काव्य 'गागर में सागर' है– सि(कीजिए?

प्र. 7 'सतसैया के दोहरे ज्यों नायक के तीर।
'देखन में छोटे लगे घाव करै गंभीर।' इस दोहे के आधार पर बिहारी की उक्ति वक्रता पर प्रकाश डालें?

प्र. 8 घनानंद के प्रेम संबन्धी दृष्टिकोण पर प्रकाश डालिए?

प्र. 9 स्वच्छंद काव्यधारा में घनानंद का स्थान निर्धारित कीजिए ?

प्र. 10 घनानंद 'प्रेम के पीर' थे। इस कथन के आधार पर घनानंद की विरह भावना पर प्रकाश डालिए?

प्र. 11 'लोग हैं लगि कवि बनावत, मोहि को मेर कवित बनावत'– इस उक्ति के आधार पर घनानंद के काव्य सौष्ठव पर प्रकाश डालिए?

प्र. 12 घनानन्द की काव्य कला पर प्रकाश डालिये?

प्र. 13. 'घनानंद' के प्रेम में वैषम्य की प्रधानता है। कथन के आधार पर उनके प्रेम के विभिन्न पक्षों को उजागर कीजिए?

प्र. 14 मीरां के काव्य में विरह वेदना का वर्णन कीजिए।

प्र. 15 मीरांबाई की साहित्यिक विशेषताओं का वर्णन करें।

प्र. 16 मीरांबाई की भक्ति भावना का वर्णन करें।

प्र. 17 रसखान का साहित्यिक परिचय देते हुए उनकी विशेषताओं का वर्णन करें।

प्र. 18 रसखान की भक्ति को स्पष्ट करें।

प्र. 19 रसखान का काव्य सौन्दर्य स्पष्ट करें।

;ोपहदउमदजद्ध पदत्त कार्य के प्रश्न

किन्हीं चार प्रश्नों के उत्तर दे।

1. मीरा की भक्ति भावना का वर्णन कीजिए।
2. बिहारी के काव्य की काव्यगत विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
3. रसखान का साहित्यिक परिचय लिखें।
4. घनानंद का काव्य प्रेम की अभिव्यंजना है, स्पष्ट करें।
5. बिहारी का काव्य सौन्दर्य स्पष्ट करें।

सहायक पुस्तकें

1.	बिहारी	जगन्नाथ दास रत्नाकर
2.	बिहारी	विश्वनाथ प्रसाद विश्व
3.	बिहारी का वाग्विभूति	विश्वनाथ प्रसाद विश्व
4.	कविवर बिहारीलाल	राधाकृष्ण दास
5.	बिहारी और उनका साहित्य	डॉ. हरवेशलाल तथा परमानंद शास्त्राी
6.	बिहारी बोधिनी	लाला भगवान दीन
7.	दरबारी संस्कृति और हिन्दी पुस्तक	डॉ. त्रिाभुवन सिंह
8.	बिहारी सतसई	पदम सिंह शर्मा
9.	मुक्त काव्य परम्परा और बिहारी	डॉ. समसागर त्रिापाठी
10.	हिंदी काव्य में शृंगार परंपरा और महाकवि बिहारी	डॉ. गणपति चन्द्र गुप्त
11.	बिहारी की काव्य कला	उदयभानु हंस
12.	बिहारी का नया मूल्याकन	डॉ. बच्चन सिंह
13.	घनानंद	डॉ. लल्लन राय
14.	घनानंद और स्वच्चार काव्यधारा	डॉ. मनोहर लाल गौड़
15.	घनानंद का काव्य	डॉ. रामदेव शुक्ल
16.	घनानंद की काव्य साधना	डॉ. सभापति विश्व
17.	घनानंदः संवदेना और शिल्प	राज बुि(राजा
18.	मीरांबाई की पदावली	डॉ. ओम प्रकाश शर्मा शास्त्राी
19.	मीरां की काव्य कला और जीवनी	प्रो. नारायण शर्मा
20.	मीरा : एक समीक्षात्मक अध्ययन	डॉ. मदन लाल शर्मा
21.	मीरां का काव्य	विश्वनाथ त्रिापाठी

———